

उपमान ज्ञान संदेश

ब्रह्मर्षि तटवर्ती वीर राघव राव



उपमान ज्ञान संदेश



लेखक : ब्रह्मर्षि तटवर्ती वीर राघव राव
हिन्दी अनुवाद: श्रीनिवास रेड्डी कर्रा

For Books Please Contact :
TATAVARTHY VEERA RAGHAVARAO
Tatavarthivari Street, BHIMAVARAM-534201.
W.G.Dist., A.P. Ph: 94403 09812

Rs.100/-



ब्रह्मविध्वरिष्ठ तटवर्ति राज्यलक्ष्मी के हिन्दी किताब

- 1) एक और जन्मRs.160/-
- 2) साधना में स्थितियाँ..... Rs.80/-
- 3) ज्ञान माला Rs.70/-
- 4) श्री दत्तात्रेय जी का 24 गुरुओं ।..... Rs.70/-
- 5) अगर मानव को योगी बनना है तो ? Rs.60/-
- 6) गुरु पूर्णिमा का विशिष्टता Rs.60/-
- 7) महात्माओं का संदेशों..... Rs.50/-
- 8) मानव के कर्तव्यों Rs.50/-
- 9) गुरु पूर्णिमा का विशिष्टता Rs.50/-
- 10)शाकाहार ही मानव का आहार है !..... Rs.50/-

ध्यान की पद्धति - श्वास पर ध्यान

हर किसी को अपने लिए उपयुक्त सुखासन में आराम से बैठकर.. दोनों हाथों को मिलाकर... आंखों को बंद करके... सहज रूप से होने वाले उच्छ्वास और निश्वास पर गौर करना है !

बीच में कई सारे विचार हमारे मन में आते रहते हैं, उन सबका खंडन करते हुए... वापस हमारे ध्यान को श्वास पर लाना है... ध्यान भटकता रहेगा लेकिन वापस श्वास पर ध्यान लाते रहना है. धीरे-धीरे.. विचार रहित स्थिति प्राप्त होगी... चित्तवृत्ति का निरोध होगा मन शून्य बन जाएगा। मन शांति प्राप्त करेगा। यही ध्यान स्थिति है।

इस विचार रहित स्थिति में प्राप्त होने वाले शारीरिक, तंत्रिका व्यवस्था और आत्मानुभव पर ध्यान देते रहना है। उस स्थिति में असीमित विश्वमय प्राणशक्ति शरीर के अंदर प्रवाहित होकर तंत्रिका व्यवस्था की शुद्धि करती है। इस शक्ति के कारण सारे रोग दूर हो जाते हैं। तंत्रिका व्यवस्था की शुद्धि के कारण सारे कर्म दूर हो जाते हैं।

साधारण रूप से मनुष्य की उम्र जितनी है.. कम से कम उतने मिनट तक.. हर रोज दिन में दो बार... ध्यान करना है।

उपमान ज्ञान संदेश

::1::

पत्रीजी ने कहा है “ ध्यान से ही ज्ञान होता है, और ज्ञान से ही मुक्ति होती है।” यह बात स्पष्ट रूप से समझनी चाहिए कि मुक्ति केवल ज्ञान से ही प्राप्त होती है। प्रत्येक व्यक्ति कष्टों और समस्याओं से मुक्ति पाना चाहता है। ऐसी मुक्ति ज्ञान से ही आती है।

इसलिए ज्ञान की महानता और ज्ञान की आवश्यकता को प्रत्येक व्यक्ति को समझना चाहिए। महान पुरुष, ज्ञानी, योगीश्वर, जिन्हें लोग देवता मानते हैं। वे सभी ज्ञान प्राप्त करने वाले ही हैं। वे ज्ञान का उपदेश देने वाले ही हैं। उन्होंने ज्ञान के लाभों को अनेक प्रकार से बताया है।

ऐसा ही ज्ञान, पत्रीजी के अनुसार, केवल “ श्वास पर ध्यान ” की साधना से ही प्राप्त होता है।

इसलिए महान लोगों ने कहा है कि ध्यान करने से जो ज्ञान प्राप्त होता है। उस ज्ञान की महानता को यदि उपमानों के माध्यम से समझाया जाए, तो ज्ञान भली-भाँति समझ में आता है और ज्ञान प्राप्त करने की रुचि उत्पन्न होती है।

यदि ज्ञान की महानता समझ में न आए, तो लोग इस ज्ञान-मार्ग को छोड़ देते हैं। इसमें कुछ भी नहीं है ऐसा मानकर, वे नए-नए मार्गों और भिन्न-भिन्न गुरुओं का आश्रय लेते रहते हैं। अंततः वे जीवन और परिश्रम को व्यर्थ कर लेते हैं।

इसलिए ज्ञान की महानता समझाने के लिए उपमानों और उदाहरणों का प्रयोग किया जाए, तो इस आध्यात्मिक मार्ग में अधिक श्रद्धा और दीक्षा के साथ प्रयास करने की संभावना बनती है। अतः अब एक उपमान लेते

हैं।

“बीज बोने के बाद अनेक दिनों तक प्रतीक्षा करनी पड़ती है। उस प्रतीक्षा में किया गया परिश्रम व्यर्थ प्रतीत होता है। लेकिन कुछ दिनों बाद वह बीज फूटता है और पौधा बाहर आता है। किया गया परिश्रम फल देता है।”

इसी प्रकार, ज्ञान के लिए “श्वास पर ध्यान” की साधना करने वालों को भी कुछ समय प्रतीक्षा करनी पड़ती है। उस समय ऐसा लगता है कि किया गया परिश्रम व्यर्थ जा रहा है। किंतु निरुत्साहित हुए बिना निरंतर साधना करते रहें, तो किसी न किसी दिन फल अपने-आप प्राप्त होता है। किया गया परिश्रम फलित होता है।

क्योंकि सामान्यतः कोई भी व्यक्ति कुछ करते ही तुरंत परिणाम चाहता है। जैसे किसी दुकान पर जाएँ तो पहले सामान मिलने पर ही बाद में पैसे देते हैं। सामान हाथ में दिए बिना आप पैसे नहीं देते।

परंतु सृष्टि का नियम ऐसा नहीं है। “जो करना चाहिए, वह करने पर ही जो प्राप्त होना चाहिए, वह प्राप्त होता है।” “पहले मिले तो करूँगा”, ऐसा नहीं चलता। इच्छित फल चाहिए तो यह जाने बिना कि कितना करना है, कितने समय तक करना है, किस प्रकार का ध्यान करना है केवल थोड़ी देर आँखें बंद कर के “नहीं आ रहा, नहीं आ रहा” कहते हुए साधनाएँ बदलते रहना, गुरु बदलते रहना, इससे कुछ भी प्राप्त नहीं होता।

यहाँ सृष्टि का नियम यह है। “जो करना चाहिए, वही करने पर प्राप्त होने योग्य वस्तु प्राप्त होती है।” अब आप इस ध्यान को स्वास्थ्य

समस्याओं के लिए, आर्थिक समस्याओं के लिए, पारिवारिक समस्याओं के लिए, वृद्धावस्था की समस्याओं के लिए, घर-गृहस्थी के झगड़ों के लिए, बच्चों, माता-पिता, पति-पत्नी के बीच की समस्याओं के लिए कर रहे हैं।

कुछ लोगों के पास बच्चे होते हैं और वे उनसे परेशान होते हैं; कुछ लोगों के बच्चे नहीं होते और वे दुःखी रहते हैं। कुछ लोग दिन-रात मेहनत करने पर भी धन नहीं कमा पाते। कई वर्षों तक ध्यान करने पर भी रोग नहीं घटते। जो भी गुरु आता है, वही कहता है ध्यान करो, रोग दूर हो जाएँगे। यह सुनकर लोग सोचते हैं, अच्छा, ध्यान से रोग दूर होते हैं, और करने लगते हैं। परंतु वास्तव में ध्यान क्या है? और क्यों है? यह कितने लोग जानते हैं?

जब यह प्रश्न पूछा जाता है, तो लोग अनेक प्रकार के उत्तर देते हैं। अपने-आप को जानना, अपने भीतर जाना, ध्यान का अर्थ “श्वास पर ध्यान” है। ऐसे भिन्न-भिन्न उत्तर देते हैं। पर जब कहा जाता है कि ध्यान “श्वास पर ध्यान” भी नहीं है, तब लोग अत्यंत आश्चर्यचकित हो जाते हैं।

तब कुछ लोग पूछते हैं, तो फिर पत्नीजी ने स्पष्ट रूप से कहा है कि ध्यान ‘श्वास पर ध्यान’ है। आप ऐसा क्यों कह रहे हैं कि यह ध्यान नहीं है?”

ध्यान रखें, ध्यान का अर्थ है विचार-रहित अवस्था में पहुँचना। उसी को पतंजलि महर्षि ने “निर्विषय मनः ध्यान” कहा है। उन्होंने “चित्तवृत्ति निरोधः” भी कहा है। यदि यह मूल अर्थ समझ में न आए, तो

कोई लाभ नहीं होता। लोग उसमें कुछ भी प्राप्त नहीं कर पाते और अंततः निरुत्साहित हो जाते हैं।

विचार-रहित अवस्था का अर्थ है, मन का कार्य न करना। क्योंकि विचार मन ही करता है। यदि विचार चल रहे हैं, तो मन कार्य कर रहा है। यदि विचार नहीं हैं, तो मन कार्य नहीं कर रहा। इसलिए यदि आपका “मन किसी भी रूप में कार्य कर रहा है, तो आप ‘ध्यान’ नहीं कर रहे हैं।”

इसी कारण पत्नीजी ने कहा कि आँखें बंद करके नाम-स्मरण करने पर मन कार्य करता है, इसलिए वह ध्यान नहीं है। मंत्र-जप करने पर भी मन कार्य करता है, इसलिए वह भी ध्यान नहीं है। किसी रूप की कल्पना करने पर, रूप पर ध्यान लगाने पर भी मन कार्य करता है, इसलिए वह भी ध्यान नहीं है। इसलिए पत्नीजी ने कहा, कोई नाम नहीं, कोई मंत्र नहीं, कोई रूप नहीं।

इसी प्रकार, आजकल मार्गदर्शन (गाइडिंग) में शब्द बोले जाते हैं। लोग उन्हें सुनते हैं और कहे गए शब्दों के अनुसार मन में कल्पना करते हैं। इसलिए मन कार्य करता है। अतः गाइडिंग भी ध्यान नहीं है। संगीत सुनने पर भी मन सुनता है इसलिए वहाँ भी मन कार्य करता है। अतः वह भी ध्यान नहीं है।

क्यों? “मन कार्य करे तो ध्यान नहीं। मन कार्य न करे तभी ध्यान।”

यह अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। किसी को भी स्पष्ट करना हो, तो यही स्पष्ट करना चाहिए। तो फिर मन के कार्य न करने की अवस्था कैसे आती है? पत्नीजी ने कहा है, वह अवस्था केवल “श्वास पर ध्यान” से ही

आती है।

ध्यान रखें वह अवस्था केवल “श्वास पर ध्यान” से ही आती है, और किसी भी अन्य माध्यम से नहीं। न संगीत से, न गाइडिंग से, न ओंकार ध्यान से, न कर्म-विपाक ध्यान से।

इसीलिए पत्रीजी ने कहा ध्यान एक ही है, और वह है “श्वास पर ध्यान”।

अब देखिए मान लीजिए आपने एक घंटे ध्यान किया। उस एक घंटे में आप पहले आँखें बंद करते हैं। आँखें बंद करते ही विचार आते हैं।

जब विचार आते हैं, तो आप उन्हें काटकर “श्वास पर ध्यान” लगाते हैं। श्वास को देखते-देखते फिर विचारों में चले जाते हैं, फिर काटते हैं।

इस प्रकार पूरा घंटा विचारों के साथ ही चलता रहता है। किंतु आपको पता भी नहीं चलता कि एक मिनट, या पाँच मिनट के लिए विचार रुक जाते हैं। घंटा पूरा होने पर आप “ठीक है” कहते हैं और आँखें खोलते हैं।

अब आपने एक घंटा बैठा, परंतु वास्तविक ध्यान केवल एक मिनट हुआ। क्योंकि पूरे समय “श्वास पर ध्यान” रखने पर भी मन कार्य कर रहा था।

इसलिए “श्वास पर ध्यान” भी स्वयं ध्यान नहीं है। “श्वास पर ध्यान” के द्वारा जितनी देर आप मन के कार्य न करने की अवस्था में रहते हैं। उतनी ही देर आपने ध्यान किया है, और उतनी ही देर आपको शक्ति प्राप्त हुई है। यदि यह बात न समझी जाए, तो लोग यह मान लेते हैं कि

उन्होंने एक घंटे ध्यान किया।

इसलिए पत्रीजी ने कहा अनेक प्रकार के ध्यान नहीं हैं। ध्यान एक ही है "श्वास पर ध्यान"। समझ लें "आँखें बंद करना ध्यान नहीं है; मन को बंद करना ही ध्यान है।" इसलिए जो करना चाहिए वह है "श्वास पर ध्यान"। वही करने पर प्राप्त होने योग्य ज्ञान प्राप्त होता है।

दुनिया में मनुष्यों को अनेक प्रकार के कष्ट, दुःख और रोग होते हैं। ये सब पूर्व में किए गए कर्मों के कारण आते हैं। कर्मों से उत्पन्न कष्ट ध्यान से नहीं घटते, क्योंकि ध्यान में कर्म नष्ट नहीं होते वे दग्ध नहीं होते। श्रीकृष्ण ने स्पष्ट कहा है ज्ञानाग्नि दग्ध कर्माणाम।" अर्थात् कर्म केवल ज्ञान की अग्नि में ही दग्ध होते हैं। इसलिए ज्ञान इतना महान है। इसलिए ज्ञान प्राप्त करना चाहिए। या फिर, जब तक वे कर्म समाप्त न हों छः महीने या एक वर्ष धैर्यपूर्वक उन्हें भोगना चाहिए।

इसलिए ऐसा नहीं करना चाहिए कि बीज बोकर, जब पौधा तुरंत न आए, तो यह कह दें, यह अच्छा बीज नहीं है, और दूसरा बीज बो दें। बीज बोकर प्रतिदिन थोड़े-थोड़े समय तक पानी देना चाहिए और प्रतीक्षा करनी चाहिए। क्यों नहीं आता? वह बीज फूटेगा, पौधा बाहर आएगा। किया गया परिश्रम फल देगा।

इसी प्रकार, ध्यान प्रारंभ करके अभी ज्ञान नहीं आया" कहकर गाइडिंग में, कर्म-विपाक ध्यान में, मनी मेडिटेशन में, संकल्प ध्यानों में, ओंकार ध्यानों में नहीं जाना चाहिए। पत्रीजी द्वारा दिए गए "श्वास पर ध्यान" को दृढ़ता से करते हुए, आहार-नियमों का पालन करने पर, प्राप्त होने योग्य ज्ञान प्राप्त होता है। कर्म रहित होते हैं। कष्टों से मुक्ति मिलती है।

::2::

“एक कमल के फूल पर एक भौरा बैठा। तभी अँधेरा हो गया और कमल का फूल बंद हो गया; भौरा उसके भीतर ही रह गया। भौरा ने सोचा, थोड़ी देर में सुबह हो जाएगी, तब मैं बाहर निकल जाऊँगा। लेकिन इसी बीच एक हाथी आया, उसने उस तालाब को तहस-नहस कर दिया और कमल के फूलों को पैरों से कुचल दिया। उस फूल के भीतर मौजूद भौरा मर गया।”

इसी प्रकार मनुष्य का जीवन कब समाप्त हो जाए, यह किसी को नहीं पता। अवसर रहते ही ध्यान-साधना करनी चाहिए, ज्ञान प्राप्त करना चाहिए, आत्मा को जानने का प्रयास करना चाहिए, और जो ज्ञान स्वयं ने जाना है उसे दूसरों तक पहुँचाने का प्रयत्न करना चाहिए।

उस भौरा ने सोचा था कि सुबह होते ही बाहर निकल जाएगा। लेकिन हाथी के आने से सब कुछ कुचला गया और वह मर गया। वैसे ही मनुष्य भी यह सोचकर असावधान हो जाता है कि अभी बहुत समय है, बहुत दिनों तक जिएँगे, धीरे-धीरे ध्यान-साधना कर लेंगे, धीरे-धीरे ज्ञान प्राप्त कर लेंगे। परंतु किसी का जीवन कब समाप्त होगा यह किसी को नहीं पता।

वास्तव में मैं कौन हूँ? मैं यहाँ किस लिए आया हूँ? जो करना चाहिए, वह कर रहा हूँ या नहीं? दिए गए समय में जो प्राप्त करना चाहिए, वह प्राप्त कर रहा हूँ या नहीं? इन बातों पर विचार करना चाहिए और प्रयास करना चाहिए।

पत्रीजी ने सदा कहा कि मृत्यु के लिए तैयार रहना चाहिए। “मेरी अभी बहुत उम्र है”, ऐसा सोचकर बैठना नहीं चाहिए। इसी कारण महाभारत में यक्ष ने धर्मराज से एक प्रश्न पूछा, आश्चर्य की बात क्या है? धर्मराज ने उत्तर दिया, लोग संसार में कितनों को जाते देखते हैं, फिर भी स्वयं को शाश्वत मानकर जीते हैं, यही सबसे आश्चर्य की बात है।

पत्रीजी ने कहा था मैं 2095 तक रहूँगा। उनके देह-त्याग को तीन वर्ष हो गए। यह कितना आश्चर्यजनक है। इसलिए यह जान लेना चाहिए कि कोई भी शाश्वत नहीं है; प्रत्येक व्यक्ति को किसी न किसी दिन शरीर छोड़ना ही है। अतः स्त्री हो या पुरुष यह समझना चाहिए कि शरीर ज्ञान प्राप्त करने के लिए दिया गया उपकरण मात्र है। लेकिन आप इसी उपकरण को “मैं” मान बैठे हैं।

आप उपकरण कैसे हो सकते हैं? आपके घर में उपयोग के अनेक उपकरण होते हैं। स्त्रियों के लिए झाड़ू, टोकरी, रसोई के बर्तन कितने ही उपकरण होते हैं। पुरुषों के लिए स्कूटर, कार, साइकिल कितने ही उपकरण होते हैं। क्या आप झाड़ू से सुबह घर साफ करके उसे गले में डालकर घूमते हैं? नहीं न? काम पूरा होने पर उसे रख देते हैं। उसी प्रकार आत्मा रूप आप के लिए यह शरीर भी एक उपकरण ही है।

यह शरीर रूपी उपकरण भी उपयोग करके छोड़ दिया जाता है। जैसे कुछ समय बाद झाड़ू घिसकर बेकार हो जाती है, वैसे ही यह देह रूपी उपकरण भी बूढ़ा होकर अनुपयोगी हो जाता है। देखिए नई झाड़ू काम करती है; घिसी हुई झाड़ू क्या काम करती है? नहीं करती। वैसे ही युवा अवस्था में उपयोगी शरीर, बूढ़ा होने पर वैसा काम नहीं करता। ऐसे

शरीर से कोई लाभ नहीं।

अंत में झाड़ू को बाहर फेंक दिया जाता है। उसी प्रकार अंत में देह को भी छोड़ दिया जाता है।

इसलिए प्रत्येक व्यक्ति को जब तक यह उपकरण है, अर्थात् जब तक यह देह है, तब तक ऐसे कार्य करने चाहिए जो आपको, अर्थात् आत्मा को, लाभ पहुँचाएँ। सभी में आत्मा को सबसे अधिक लाभ पहुँचाने वाला ज्ञान है। इसलिए इस देह से ध्यान करके ज्ञान प्राप्त करना चाहिए। आत्मज्ञान से संबंधित पुस्तकें पढ़नी चाहिए, सज्जनों के साथ सत्संग करना चाहिए, और इस मार्ग में जितनी सेवा हो सके, करनी चाहिए। इस प्रकार प्राप्त किया गया ज्ञान केवल इस लोक में ही नहीं, बल्कि इस देह को छोड़कर ऊपर के लोकों में जाने के बाद भी लाभ देता है। वह उन्नति कराता है और ऊर्ध्व लोकों तक पहुँचाता है। जो यह समझ लेते हैं कि शरीर शाश्वत नहीं है 'यह केवल एक उपकरण है' और इसे सही ढंग से उपयोग करते हैं, वही भाग्यशाली हैं।

मुझे पत्नीजी से परिचय होने से पहले तेईस वर्ष पहले तक, यह समझ नहीं थी कि मैं आत्मा हूँ और यह शरीर एक उपकरण है। मैंने इस उपकरण को एक नाम दे रखा था; नाम मिलने पर प्रसन्न होता था और और अधिक नाम पाने की लालसा रखता था। इसी तरह दिन-रात शरीर के लिए ही परिश्रम करता रहा। इसे ए.सी. में सुलाना, कार में घुमाना, दिन में तीन बार अच्छा खिलाना, इसे सजाना यही चिंता बनी रहती थी।

मैं यह मानता था कि जितना धन, उतना सम्मान; धन होगा तभी लोग बात करेंगे, अभिवादन करेंगे, आदर करेंगे। इसी सोच से मैंने इस

शरीर रूपी उपकरण को धन कमाने में लगाया। बड़ा राइस-मिल बनाया और व्यापार किया।

तभी पत्रीजी से परिचय हुआ। उन्होंने कहा “तू देह नहीं है।” एक बार यह वाक्य सुनते ही मुझे आश्चर्य हुआ। यह क्या कह रहे हैं ऐसा लगा। तब मैंने पूछा तो मैं कौन हूँ? उन्होंने कहा आत्मा। इतने बड़े व्यक्ति हैं ऐसे ही बात नहीं कहेंगे यह सोचकर मैंने बहुत विचार किया। इससे पहले मैंने “आत्मा” शब्द सुना तो था, पर वह कहाँ है यह नहीं जानता था। इसलिए पुस्तकें पढ़ीं, अनेक लोगों से पूछा, कई वीडियो सुने।

अंततः समझ में आया कि उन्होंने जो कहा, वही सत्य है। तब मैंने सोचा यदि मैं आत्मा हूँ, तो पचास वर्षों में कष्ट से कमाए गए ये करोड़ों मेरे किस काम आएँगे? उत्तर मिला नहीं आएँगे। तभी मैंने अपने सारे व्यवसाय बंद कर दिए। धन-संचय छोड़कर ज्ञान-संचय प्रारंभ किया। अपने राइस-मिल परिसर में ध्यान-मंदिर बनवाया। पहले राइस-मिल से धन आता था; अब इस ध्यान-मंदिर से ज्ञान आता है। धन देह को लाभ देता है, ज्ञान आत्मा को लाभ देता है।

फिर मैंने यह भी सोचा अब तो उम्र हो गई है; तिरपन वर्ष हो गए। मेरे पिता छप्पन वर्ष में चले गए; बड़े पिता अट्ठावन में; छोटे चाचा साठ से पहले। सब साठ के भीतर चले गए। तब मुझे लगा अब तक मैंने कोई ज्ञान प्राप्त नहीं किया। मैंने पत्रीजी से पूछा यदि आप दस वर्ष पहले मिले होते तो कितना अच्छा होता; मैं बहुत ज्ञान प्राप्त कर लेता।

उन्होंने कहा उस चिंता में मत पड़ो। कम से कम अब से सावधान रहो। तब से मैं आत्मा रूप मुझे लाभ पहुँचाने वाला ज्ञान बढ़ाने के लिए ये

चार कार्य कर रहा हूँ

1. श्वास पर ध्यान रखकर ध्यान करना ।
2. आत्मज्ञान से संबंधित पुस्तकें पढ़ना ।
3. आत्मज्ञान सिखाने वालों के साथ सत्संग करना ।
4. इस ज्ञान-मार्ग में सेवा करना अर्थात् जो ज्ञान मैंने प्राप्त किया

है, उसे सबके साथ बाँटना ।

पत्रीजी ने कहा है न “ जो बाँटा जाता है, वही बढ़ता है ।” अब मुझे ज्ञान चाहिए; इसलिए मैं ज्ञान ही बाँट रहा हूँ । जो ये सब करते हैं, वही जीवन का सदुपयोग करते हैं । कौन जानता है कब इस देह रूपी उपकरण को छोड़ना पड़े । इसलिए रहते हुए ही इसका सदुपयोग करना चाहिए ।

यदि कोई इस देह रूपी उपकरण का उपयोग न करे, तो उसकी स्थिति कैसी होती है एक छोटा उदाहरण देता हूँ ।

एक व्यक्ति ने बीस लाख रुपये देकर नई कार खरीदी । कार चमकती रहती थी । वह उसे शेड में रख देता । बाहर निकालने से कीचड़ लग जाएगा, कहीं खरोँच पड़ जाएगी इस डर से वह कार बाहर निकालता ही नहीं था । रोज़ पॉलिश-क्लॉथ से धूल पोंछ देता ।

ऐसे ही पंद्रह वर्ष बीत गए । बाद में किसी कारण से उसने कार उपयोग में लाने के लिए बाहर निकाली । तब कार में जंग लग चुकी थी; स्टार्ट नहीं हुई; बैटरी खत्म थी । वह पूरी तरह अनुपयोगी हो गई । तब वह बहुत दुःखी हुआ यदि मैंने शुरू से इसका उपयोग किया होता तो कितना काम आता; कितनी जगह जाता ऐसा सोचकर पछताया ।

इसलिए किसी को भी शरीर रूपी उपकरण पर दया दिखाकर

उसे न इस्तेमाल करना नहीं चाहिए। आवश्यकता के लिए अर्थात् ध्यान और ज्ञान के लिए इसका उपयोग करना चाहिए।

यदि इस शरीर रूपी उपकरण को थक जाएगा सोचकर ए.सी. कमरे में रख दें, दिन में तीन बार अच्छा खिलाएँ तो कुछ समय बाद यौवन चला जाता है, शरीर बूढ़ा और कमजोर हो जाता है। तब ध्यान करने को कहें तो वह क्या करेगा? इसलिए जब यह उपकरण सक्षम अवस्था में हो अर्थात् युवावस्था में तब इसका अच्छे से उपयोग करें; ध्यान कराएँ। तब यह बहुत ज्ञान अर्जित कर देगा और आत्मरूप आपको बड़ा लाभ पहुँचाएगा।

रमण महर्षि और शिरडी बाबा जैसे महान लोगों ने शरीर का जैसा उपयोग किया, वैसा ही उपयोग करना चाहिए। केवल शरीर को सुख देने से कोई लाभ नहीं। इसलिए इस शरीर का उपयोग सभी तक ज्ञान पहुँचाने में करें वह आपको अत्यंत लाभ देगा।

::3::

“चार इंच गहरे गंदे पानी में न तो खतरनाक साँप दिखाई देते हैं, न काँच के टुकड़े, न लोहे की कीलें। इतना ही नहीं ऊपर का आकाश, सूर्य और चंद्रमा भी उस गंदे पानी में प्रतिबिंबित नहीं होते।”

इसी प्रकार जिनका मन मलिन होता है, उन्हें सुनी हुई बातें ठीक से समझ में नहीं आतीं; उनमें विवेक नहीं होता; वे सही निर्णय नहीं कर पाते और मूर्खों की तरह व्यवहार करते हैं। इतना ही नहीं वे बुरी आदतों और बुरी लतों के वशीभूत हो जाते हैं और उनके कारण आने वाले कष्टों को झेलते हुए जीवन में नरक का अनुभव करते हैं।

परंतु शुद्ध जल में चार गज की गहराई में भी तल में पड़ी कोई भी वस्तु दिखाई देती है। उस जल की सतह पर आकाश तथा सूर्य-चंद्रमा के प्रतिबिंब भी दिखाई देते हैं। उसी प्रकार जिनका मन शुद्ध होता है, उन्हें अपने कर्मों के फल का बोध होता है और वे उनसे केवल लाभ ही प्राप्त करते हैं।

इसी प्रकार यदि एक छोटे से कीट को लें, तो उसमें आत्मशक्ति बहुत ही अल्प मात्रा में प्रकट होती दिखाई देती है। लेकिन जो योगी ध्यान करते हैं, उनमें आत्मशक्ति अत्यधिक रूप से प्रकट होती दिखाई देती है। इस प्रकार प्रत्येक मनुष्य में उसके अंतःकरण की शुद्धि के अनुसार आत्मप्रकाश में भिन्नताएँ दिखाई देती हैं। और उनके परिणाम भी उसी प्रकार प्रकट होते रहते हैं।

इसी संदर्भ में देखें गंदे पानी और स्वच्छ पानी का अंतर बताया गया है। नाले में बहता गंदा पानी होता है; वह बहता तो रहता है, पर उसकी गहराई अधिक नहीं होती लगभग चार इंच ही। फिर भी उस गंदे

पानी के नीचे क्या है, दिखाई नहीं देता। यदि कोई उसमें उतर जाए, तो कुछ दिखता नहीं। यदि उसमें विषैले सर्प हों, तो उनके काटने का खतरा रहता है; काँच के टुकड़े या कीलें हों, तो पैर में चोट लग सकती है। अर्थात् गंदे पानी से कितना खतरा है एक बार विचार कीजिए।

परंतु मानस-सरोवर में स्वच्छ जल होता है। वह जल चाहे जितना गहरा हो, नीचे की भूमि दिखाई देती है; पत्थर, मछलियाँ जो कुछ भी हो सब दिखाई देता है। इसलिए उस जल में उतरने वाले को कोई खतरा नहीं रहता। गंदे पानी और स्वच्छ पानी के बीच कितना अंतर है इसे देखिए। उसी प्रकार गंदे पानी और स्वच्छ पानी की तुलना मनुष्य के मन से की गई है।

तमोगुण और रजोगुण में रहने वालों का मन मलिन होता है। इसलिए मलिन मन वाले लोग क्या कर रहे हैं यह उन्हें स्वयं भी पता नहीं होता। भले-बुरे का भेद नहीं जानते। विवेक नहीं होता। वे क्या बोल रहे हैं यह भी उन्हें समझ में नहीं आता। उनके कार्य अत्यंत मूर्खतापूर्ण होते हैं; “मुझे सब पता है” ऐसा कहते हैं; किसी की बात नहीं सुनते; जो नहीं करना चाहिए वही करते हैं। अंततः उनके फलस्वरूप कष्टों को बुलाकर जीवन में नरक का अनुभव करते हैं।

परंतु शुद्ध मन वाले अर्थात् सात्त्विक गुण में रहने वालों की बुद्धि ठीक से कार्य करती है। वे सही निर्णय लेते हैं। उनमें विवेक होता है क्या धर्म है, क्या अधर्म; क्या हानि पहुँचाता है, क्या लाभ देता है यह सब उन्हें स्पष्ट रहता है। इसलिए उनके निर्णय और उनके कर्म उन्हें लाभ ही पहुँचाते हैं। उन्हें क्या करना है यह बताने के लिए किसी की आवश्यकता नहीं पड़ती; उनकी शुद्ध बुद्धि ही सब बता देती है। शुद्ध बुद्धि होने पर सही

निर्णय लिया जा सकता है।

यदि मलिन मन को शुद्ध मन बनाना है, तो सही ध्यान अर्थात् “श्वास पर ध्यान” करना चाहिए और सात्त्विक शाकाहार ग्रहण करना चाहिए। ऐसा करने पर मन शुद्ध होता है। तब किसी से सलाह लेने की आवश्यकता नहीं रहती; आप स्वयं सही मास्टरों लेते हैं।

बहुत-से लोग वरिष्ठ मास्टर से सलाह और समस्याओं के समाधान पूछते रहते हैं। ऐसे में कुछ मास्टर कहते हैं आपमें नकारात्मक ब्लॉक है; एनर्जी पास करनी पड़ेगी; इसके लिए इतना खर्च होगा और हजारों-लाखों लेते हैं। लोग उन पर विश्वास करके धन दे देते हैं। कुछ समय बाद कोई परिवर्तन नहीं होता। फिर पूछें तो कहते हैं एक और प्रक्रिया करनी होगी, और दो-तीन लाख भेजिए। भेजने के बाद वे फोन भी नहीं उठाते। वे कहाँ हैं पता नहीं; लोग परेशान होकर पागल-से हो जाते हैं।

इसलिए किसी से सलाह माँगने की आवश्यकता नहीं। सीधे तीव्र साधना करें। इससे उत्तम कार्य और कोई नहीं। तीव्र साधना का अर्थ है विचार-रहित अवस्था में घंटे-घंटे बैठ पाने की क्षमता। तब आप अपार शक्ति प्राप्त करते हैं। जैसे-जैसे शक्ति बढ़ती है, वैसे-वैसे गुण बदलते हैं और मन शुद्ध होता जाता है।

इसीलिए भीमावरम आकर तीव्र साधना करें। अधिक घंटे “श्वास पर ध्यान” करते हुए, आहार-नियमों का कठोरता से पालन करने पर निश्चय ही आपका अंतःकरण शुद्ध हो जाता है। अंतःकरण का अर्थ है मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार। अंतःकरण-शुद्धि से हृदय-शुद्धि भी होती है। हृदय-शुद्धि होने पर शरीर में आत्म-शक्ति अपार रूप से प्रकट होती

है।

उदाहरण दोपहर में तेज धूप होती है; असहनीय गर्मी पड़ती है यह सूर्य का प्रताप है। यदि अचानक काले बादल छा जाएँ, तो क्या वही गर्मी रहती है? वही प्रकाश? वही तेज? नहीं रहता। क्या सूर्य वहाँ नहीं है? वहीं है। पर उसका प्रकाश, उसकी गर्मी, उसका तेज दिखाई नहीं देता क्यों? बादलों के कारण। जब अच्छी हवा चलती है और बादल हटते हैं, तब सूर्य का प्रकाश फिर सामान्य हो जाता है।

इसी प्रकार इस शरीर में स्थित आत्मा अखंड तेज, अपार प्रकाश और अकल्पनीय शक्ति से युक्त होती है। परंतु अंतःकरण के मलिन होने से हृदय भी मलिन हो जाता है; तब हृदय में स्थित आत्म-प्रकाश और आत्म-शक्ति इस शरीर में प्रकट नहीं हो पाती। इसलिए प्रत्येक व्यक्ति माधव होते हुए भी मनुष्य की तरह व्यवहार करता है। मन मलिन हो तो दुष्ट की तरह व्यवहार करता है; और अधिक मलिन हो तो दुराचारी की तरह; और अधिक मलिन हो तो पागल-सा; और अत्यधिक मलिन हो तो राक्षस-सा व्यवहार करता है।

तो क्या उसके शरीर में आत्मा नहीं है? क्या ईश्वर नहीं है? है। फिर ईश्वर होते हुए भी वह राक्षस-सा क्यों व्यवहार करता है? मन-शुद्धि के अभाव के कारण।

इसलिए सही ध्यान “श्वास पर ध्यान” करें और मन को शुद्ध करें।

::4::

समुद्र में अपार जलराशि होती है। फिर भी वह उस जल को अपने लिए उपयोग नहीं करता। सूर्य की सहायता से वह अपने जल को वाष्प में बदलकर बादलों के रूप में संसार को देता है। वह जीवों की प्यास बुझाता है, वृक्ष-जगत की वृद्धि में सहायक होता है। उसी वृक्ष-जगत के कारण समस्त जीवों का जीवन चलता है। ऐसा करने पर भी समुद्र का जल-स्तर घटता नहीं। अनेक नदियों के रूप में वही जल फिर से समुद्र में लौट आता है और समुद्र पुनः भर जाता है।

उसी प्रकार ज्ञानी द्वारा परोपकार करने से धन की कमी नहीं होती। किसी न किसी प्रकार से उसे धन प्राप्त होता ही रहता है। इतना ही नहीं, परोपकार करने वालों से दुःख भी दूर हो जाता है, उन्हें नवीन सामर्थ्य प्राप्त होता है, मन की चंचलता दूर हो जाती है। बुद्धि में नया तेज आता है, शरीर को कष्ट सहने की शक्ति प्राप्त होती है। ऐसे ज्ञानी के लिए सभी प्रकार से महानता का मार्ग सुगम हो जाता है।

इस उपमान में सृष्टि का नियम हमें सिखाया गया है। जो इसे समझ लेते हैं, वे महान बन सकते हैं और सभी प्रकार से सुख-संतोष के साथ जीवन जी सकते हैं। यहाँ ज्ञानी की तुलना समुद्र से की गई है। इस उपमा के द्वारा हम ज्ञान की महानता को समझ सकते हैं। जिन्हें यह समझ में आता है, वे ज्ञान प्राप्त करने का प्रयत्न करते हैं, क्योंकि वे जान लेते हैं कि ज्ञान से बड़ा कुछ नहीं है।

यह एक प्रकार से आश्चर्य का विषय ही है। कारण यह है कि समुद्र में अपार जलराशि होती है, जिसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती।

वही समुद्र सूर्य-किरणों की सहायता से अपने जल को वाष्प में बदलकर अर्थात् पीने योग्य न होने वाले खारे जल को उपयोगी मीठे जल में परिवर्तित कर बादलों के रूप में वर्षा करता है। इस प्रकार चौरासी लाख जीव-राशियों के जीवन और निर्वाह में अत्यंत सहायक होता है।

विचित्र यह है कि चाहे जितना जल वाष्पीकृत हो जाए, समुद्र का जल-स्तर घटता नहीं। जो जल सबके उपयोग के लिए दिया गया है, वही पुनः नदियों के रूप में समुद्र में लौट आता है।

समुद्र अपने पास उपलब्ध जल-संपदा को स्वयं उपयोग में न लाकर, संसार और प्राणियों के लिए उपयोगी ढंग से बाँट देता है। ऐसा बाँटने पर उसका जल घटता नहीं; जो बाँटा गया है, वही पुनः उसी तक पहुँच जाता है। यह सृष्टि की एक महान व्यवस्था है। मनुष्य को समुद्र से सीखने योग्य यही महान संदेश है।

क्योंकि मनुष्य अज्ञान में होने के कारण स्वार्थ से अपने पास उपलब्ध संसाधनों को केवल अपने और अपने लोगों के लिए ही उपयोग करता है। दूसरों के लिए उपयोग करने से कमी हो जाएगी इस भय से वह दे नहीं पाता।

परंतु यदि समुद्र से यह सीख ली जाए, तो यह स्पष्ट होता है कि संसार और प्राणियों के हित के लिए व्यय करने से संसाधन घटते नहीं; बल्कि बाँटते रहने से वे बढ़ते ही जाते हैं। यह बाँटना केवल ज्ञानी के लिए ही संभव है। कारण यह है कि वह जानता है सब एक ही है, सब वही है। ऐसा ज्ञानी जितना भी बाँटे, न इस लोक में हानि उठाता है, न परलोक में। वह सदा लाभ में ही रहता है।

इसका उदाहरण स्वयं हमारे पत्नीजी हैं। वे कोई करोड़पति नहीं थे। उनका एक साधारण नौकरीपेशा परिवार था। जब तक वे नौकरी में थे, नौकरी में ही रहे। किंतु नौकरी से त्यागपत्र देकर उन्होंने अपने द्वारा जाना गया ध्यान, प्राप्त किया हुआ ज्ञान और अहिंसा-मार्ग को लोक-कल्याण के लिए बाँटना आरंभ किया। उन्होंने जो भी संकल्प लिया, वह सफल हुआ।

उनके जीवन की स्थिति लोक-कल्याण के लिए प्रयत्न करने से पहले और उसके बाद दोनों में कोई समानता नहीं रही। यदि इसे ध्यान से देखा जाए, तो बाँटने में निहित महानता स्पष्ट हो जाती है। इसी कारण प्राचीनों ने समुद्र को उपमा बनाकर यह बोध दिया है।

वास्तव में देखिए क्या उनके द्वारा आरंभ किए गए प्रकल्प छोटे थे? जिन कार्यों को करोड़ों की संपत्ति वाले भी नहीं कर सके, उन्हें उन्होंने कर दिखाया। वे लोग करोड़ों कमा सकते थे, पर ऐसे कार्य नहीं कर पाए। यहाँ प्रकृति-धर्म हमें यह सिखाता है कि केवल करोड़ों कमाना महानता नहीं है; अपने पास जो है, उसमें से कुछ लोक-कल्याण के लिए और विशेष रूप से सही ध्यान के लिए उपयोग करना ही महानता है।

सत्य-ज्ञान के लिए किया गया उपयोग महान फल देता है। लोक-कल्याण के अनेक उपाय हो सकते हैं, किंतु सबसे महान है “सही ध्यान और सत्य-ज्ञान”। सही ध्यान का अर्थ है “श्वास पर ध्यान”, और सत्य-ज्ञान का अर्थ है “आत्मज्ञान”। इनके लिए व्यय करने से धन की कमी नहीं होती; किसी न किसी प्रकार से धन प्राप्त होता ही रहता है।

हमने अपने सभी व्यापार छोड़ दिए, फिर भी हमें आवश्यक

साधन प्राप्त होते रहे। हमने अनेक दुकानें बनाई थीं। उन दुकानों से किराए के रूप में आय होती रही।

पत्रीजी ने 1991 में नौकरी से त्यागपत्र दिया। उसके बाद कुछ समय उन्हें अत्यंत कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। 2002 में जब मैं उनसे परिचित हुआ, तब भी वे कठिन परिस्थिति में थे। परंतु बाद में स्थिति पूरी तरह बदल गई। अर्थात् प्रत्येक के जीवन में एक परीक्षा-काल होता है।

पत्रीजी से परिचय होने के बाद, 2003 में मैंने भी अपने सभी व्यापार बंद कर दिए। लगभग 2012-13 तक हमें अत्यंत कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। आय नहीं थी। ध्यान और ज्ञान के प्रचार हेतु गाँव-गाँव घूमना, उसके खर्च इन सबके कारण लगभग दस वर्षों तक कठिन समय रहा। 2013 के बाद स्थिति फिर बदल गई।

इन सबके बीच मुझे बार-बार पत्रीजी की ही स्मृति आती रहती थी। क्यों पता नहीं, पर 2013 के बाद मैंने पुनः दुकानें बनानी शुरू कीं। उनसे होने वाली आय से और दुकानें बनाई। इस प्रकार, बिना प्रत्यक्ष व्यापार के भी, प्रकृति ने इस तरह साधन उपलब्ध कराए।

जैसा कि इस उपमान में कहा गया है किसी न किसी रूप में प्रकृति स्वयं साधन जुटाती है यह हमारे दोनों के जीवन में घटित हुआ। चाहे परिस्थितियाँ कितनी भी कठिन रही हों, हमने यह कार्य नहीं छोड़ा। बाद में समझ में आया कि यह सब परीक्षा-काल था।

यद्यपि हमारे पास संपत्ति थी, बच्चों को अलग करने के कारण उनके हिस्से उन्हें देने पड़े। हमने केवल न्यूनतम ही अपने पास रखा। फिर

भी हमें कभी अभाव नहीं हुआ। आज भी हम अपने ऊपर व्यय करने से अधिक, सबके लिए व्यय करने को प्राथमिकता देते हैं। परोपकार करने वालों से दुःख दूर हो जाता है और नवीन सामर्थ्य प्राप्त होता है यह हमारे जीवन में भी सत्य सिद्ध हुआ।

बिना किसी पूर्व ज्ञान के इस आध्यात्मिक मार्ग में प्रवेश करने वाले हम, आज इस मार्ग में सक्षम बन पाए हैं। हमने जो कुछ प्राप्त किया है, वही आप भी प्राप्त करें यही हमारा उद्देश्य है। यहाँ “नवीन सामर्थ्य” से तात्पर्य यह है कि पहले हम पुस्तकें नहीं लिख पाते थे, अब दोनों लिख रहे हैं। पहले हम संदेश नहीं दे पाते थे, अब दे पा रहे हैं। पहले पूरी पुस्तक पढ़ने पर भी एक विषय स्पष्ट नहीं कर पाते थे; अब आप एक विषय दें, तो पूरी पुस्तक का संदेश प्रस्तुत कर सकते हैं। यही हमारी नवीन सामर्थ्य है।

हमारे घर यदि दस लोग भी आ जाएँ, तो एक दिन में ही अव्यवस्था हो जाती है। अब हर महीने चार-पाँच सौ लोग आने पर भी मैडम रसोई और कक्षाएँ संभालती हैं, मैं कक्षाएँ और बाहरी कार्य देखता हूँ और सब कार्य सहज रूप से पूरे हो जाते हैं। देखने वालों को यह आश्चर्य लग सकता है, पर यह सब परोपकार का ही फल है।

बहुत से लोग यह सोचते रहते हैं यह करूँ या वह करूँ, इससे अच्छा होगा या उससे और इसी में द्वंद्व में फँसे रहते हैं। मन कभी इधर, कभी उधर निर्णय नहीं कर पाता। पर जब आप ध्यान-साधना करते हैं, तो जो आवश्यक होता है वही करते हैं, वही सिद्ध होता है, और अच्छे फल प्राप्त होते हैं। चंचलता दूर हो जाती है और सही निर्णय संभव होते हैं।

इसी प्रकार शरीर को कष्ट सहने की शक्ति भी प्राप्त होती है। इसके लिए किसी और का उदाहरण आवश्यक नहीं हम स्वयं ही उदाहरण हैं। एक वर्ष पहले जब मेरे मुँह में अम्ल (एसिड) चला गया, तब मैं न विलाप करता रहा, न बैठकर रोया, न यह सोचा कि मेरा जीवन समाप्त हो गया है या मेरा भविष्य क्या होगा।

आग की दुर्घटना के समय भी मैडम ने ऐसा नहीं सोचा। यह दृढ़ भावना बनी रही कि मैं निश्चित रूप से इससे बाहर निकलूँगा और सामान्य रूप से जीवन जिऊँगा। ये सब ज्ञान से युक्त व्यक्ति, ज्ञानी के लक्षण हैं। ऐसे व्यक्ति की तुलना निःसंकोच समुद्र से की जा सकती है। वे सभी प्रकार से महान बन सकते हैं। महान व्यक्तियों का अनुसरण करने से कोई भी महान बन सकता है।

::5::

“यदि धान के दानों को लंबे समय तक गोदाम में रख दिया जाए, तो वे अपनी शक्ति खो देते हैं और काम के नहीं रहते। किंतु उन्हीं दानों को खेत में बोया जाए, तो अनेक गुना फल प्राप्त होता है।

उसी प्रकार, भगवान द्वारा दिए गए शरीर और इंद्रियों को उपयोग में लाए बिना रख दिया जाए, तो वे वृद्ध हो जाते हैं और अनुपयोगी हो जाते हैं। किंतु उन्हें उपयोग में लेकर ज्ञान अर्जित किया जाए, लोक-कल्याणकारी कार्य किए जाएँ, तो अनेक गुना फल प्राप्त किया जा सकता है मोक्ष भी प्राप्त किया जा सकता है और जीवन का लक्ष्य भी सिद्ध किया जा सकता है।”

महान व्यक्तियों द्वारा दिए गए संदेशों में अत्यंत गहरा अर्थ निहित होता है। उन्हें ग्रहण करने के लिए सूक्ष्म बुद्धि की आवश्यकता होती है। जो भी सुना जाए, जो भी पढ़ा जाए, जो भी जाना जाए, जो भी देखा जाए उससे सार ग्रहण करना चाहिए। यह केवल सूक्ष्म बुद्धि वालों के लिए ही संभव है।

देखिए, शरीर को ऊपर से देखने पर केवल त्वचा दिखाई देती है। उसी त्वचा को सूक्ष्मदर्शी से देखें, तो अनेक कोशिकाएँ दिखाई देती हैं। और उन कोशिकाओं को अल्ट्रा-माइक्रोस्कोप से देखें, तो उनमें और भी सूक्ष्म तत्व पाए जाते हैं। उसी प्रकार, महान व्यक्तियों के संदेशों में अत्यंत गहरे अर्थ होते हैं। यदि हम उन्हें ग्रहण कर सकें, तो वे हमारे जीवन को ही बदल देते हैं।

किसी पुस्तक को पढ़ने के लिए कहा जाए, तो लोग कहते हैं “मैंने पढ़ लिया।” केवल पढ़ लेने से न तो समझ आ जाती है और न ही

ज्ञान प्राप्त होता है। बहुत से लोग कहते हैं “वह पुस्तक समाप्त हो गई, अब नई पुस्तक चाहिए।” पढ़ना वही है जिसमें निहित सार को ग्रहण किया जाए; सार को ग्रहण करते हुए पढ़ना ही सही अध्ययन है।

पता नहीं क्यों, पर इस मार्ग में आने के बाद भी मेरे भीतर एक विशेषता रही है पुस्तक पढ़ते समय मैं तेज़ी से आगे नहीं बढ़ पाता था। सब कहते थे “पुस्तक समाप्त हो गई, पढ़ ली।” पर मुझे समझते हुए पढ़ने के लिए बहुत धीरे पढ़ना पड़ता था। केवल ऊपर-ऊपर देख लेने से पढ़ना कैसे माना जा सकता है? उससे क्या लाभ?

इसलिए, एक अनुच्छेद पढ़ने के बाद मैं उसके बारे में लंबे समय तक विचार करता था। उसमें दिए गए प्रत्येक वाक्य का अर्थ समझते हुए आगे बढ़ता था। इसी कारण मैंने कभी कोई पुस्तक पूरी नहीं पढ़ी। केवल “पुस्तक पूरी कर ली” के भाव से पढ़ना, पढ़ना नहीं माना जा सकता।

इसलिए विचार कीजिए महान व्यक्तियों द्वारा अपने स्तर पर लिखी गई शिक्षाएँ कितने अर्थ से परिपूर्ण होती हैं! इसी कारण पत्रीजी कहते हैं कि कृष्ण द्वारा उपदेशित गीता को उसी स्तर का कोई दूसरा कृष्ण ही समझ सकता है; सबके लिए वह सहज नहीं है। इसी कारण भगवद्गीता पर सैकड़ों प्रकार की टीकाएँ उपलब्ध हैं। लोग कहते हैं “हमारे पास गीता है।” पर यह नहीं देखते कि वह किसकी लिखी हुई है, किसने उसका विवेचन किया है। जो भी हाथ लगे, वही पढ़ लेने से समझ कैसे आएगी? जीवन भर ऐसा ही चलता रहता है।

इन सबमें विद्या-प्रकाशानंदगिरि स्वामी द्वारा लिखित गीतामकरंद उत्तम है। पर उससे भी अधिक, पत्रीजी द्वारा दिया गया श्रीकृष्ण संदेश मुझे

अत्यंत स्पष्ट और अद्भुत रूप से समझ में आया।

चिवटम अम्मा अपने आश्रम में आने वाले सामान्य लोगों को जो खाली समय में बैठकर व्यर्थ की बातें करते रहते थे यह समझाने के लिए कि वे कितना समय नष्ट कर रहे हैं, उन्हें खेत में ले जाकर निराई-गुड़ाई करवाती थीं। किसी दिन आश्रम के आसपास सफ़ाई करवाती थीं। तब वे लोग सोचते थे अम्मा ने हमसे श्रमदान करवाया, यह पुण्य है।”

पर उन्होंने ऐसा क्यों करवाया इसका वास्तविक कारण उन्हें समझ में नहीं आया। अम्मा का उद्देश्य यह था कि मनुष्य में अरीषड्वर्ग रूपी खरपतवार हैं उन्हें निकालना चाहिए। उसी प्रकार मन मलीन और अशुद्ध है उसे स्वच्छ करना चाहिए। खाली बैठकर व्यर्थ क्यों समय गँवाते हो? यह कार्य करो। अपने मन को शुद्ध करो। अपने भीतर के दुर्गुण और दोष दूर करो यह बात उन्होंने व्यावहारिक रूप से करके दिखा दी।

ऐसे उच्च स्तर पर स्थित व्यक्तियों के कार्य, वचन और संदेश उसी स्तर के लोगों को ही समझ में आते हैं; सामान्य लोगों को नहीं। इसलिए पहले अपनी बुद्धि को विकसित करो। उसके बाद किसी से कुछ पूछने की आवश्यकता नहीं रहती। वही बुद्धि तुम्हें सब कुछ बताएगी और सही मार्ग पर ले जाएगी। बुद्धि वह अद्भुत दिशासूचक है, जो मनुष्य को बताती है कि उसे कैसे आगे बढ़ना है।

लोग दूसरों से सलाह माँगते रहते हैं। जिसकी अपनी स्थिति ही स्पष्ट नहीं है, वह दूसरों को क्या सलाह देगा? कुछ लोग कहते हैं हमने पूरी रात बैठकर सत्संग किया।” पर वे मिलकर घंटों-घंटों व्यर्थ की बातें ही करते रहते हैं।

सत्संग का अर्थ है सत्य को जानने वालों का संग, अर्थात् आत्मा को जानने वालों का संग। केवल आत्मा को जानना ही नहीं, बल्कि उस आत्मा के विषय में चर्चा करना यही वास्तविक सत्संग है। वह आत्मा इतनी सूक्ष्म है अणु से भी सूक्ष्म, माइक्रोस्कोप से भी न दिखाई देने वाली और उसी के विषय में चर्चा करना ही सच्चा सत्संग है।

अतः इस उपमा का आशय यह है यदि धान के दानों को लंबे समय तक बिना उपयोग के गोदाम में रख दिया जाए, तो वे शक्ति खोकर व्यर्थ हो जाते हैं; किंतु उन्हें खेत में बोया जाए, तो अनेक गुना फल बड़ी फसल प्राप्त होती है।

उसी प्रकार, भगवान द्वारा दिए गए इस शरीर में केवल बाह्य इंद्रियाँ ही नहीं, अपितु आंतरिक इंद्रिय मन भी है। इन सबका उपयोग केवल दिन में तीन बार खाना-पीना-सोना तक सीमित रखने से कोई लाभ नहीं। क्या ऐसा करने से शरीर वैसा ही रहता है? नहीं। कुछ समय बाद वह वृद्ध हो जाता है, इंद्रियाँ शक्ति खो देती हैं और अनुपयोगी हो जाती हैं।

किंतु यदि शरीर और इंद्रियों को उनकी क्षमता रहते हुए उपयोग में लाया जाए अर्थात् जब भी अवसर मिले, ध्यान में बैठाया जाए तो वे अद्भुत ज्ञान अर्जित करके देते हैं। तब व्यक्ति लोक-उपयोगी अनेक कार्य करता है, अनेक सेवाएँ करता है। उसी शरीर और इंद्रियों का उपयोग करके वह अंततः अनेक गुना फल प्राप्त करता है अर्थात् मोक्ष प्राप्त करता है। वह अपने लिए निर्धारित लक्ष्य को भी सिद्ध करता है, जन्म को धन्य करता है अर्थात् जन्म-रहित अवस्था को प्राप्त करता है। जो करना चाहिए, वही करता है और सिद्ध करता है।

यदि धान को गोदाम में ही पड़ा रहने दिया जाए, तो वह अनुपयोगी हो जाता है। उसी प्रकार, यदि इंद्रियों और शरीर का उपयोग केवल निरर्थक गपशप, एक-दूसरे पर दोषारोपण और आलोचना करते हुए समय बिताने में किया जाए, तो क्या होता है? कुछ समय बाद वृद्धावस्था आ जाती है दृष्टि क्षीण हो जाती है, वाणी स्पष्ट नहीं रहती, श्रवण शक्ति घट जाती है और शरीर भी कार्य करने योग्य नहीं रहता।

इसके विपरीत, यदि इन सबका सही ढंग से उपयोग किया जाए, तो अद्भुत कार्य सिद्ध होते हैं। योगियों ने यही किया है। इसलिए केवल उन्हें देवता कहकर प्रशंसा करना, या उनके चरणों में गिरकर “हमें उद्धार का मार्ग बताइए” कहना पर्याप्त नहीं। उनके समान साधना करके ज्ञान प्राप्त करना चाहिए।

::6::

“एक बच्चे को एक रत्न मिल गया। उस बच्चे को उस रत्न का मूल्य पता नहीं था। वह उस रत्न को गोली समझकर खेलता रहा। भूख लगते ही वह उस रत्न को वहीं फेंककर घर चला जाता है।

उसी प्रकार, मनुष्य परमेश्वर की कृपा से प्राप्त रत्न जैसे इस अमूल्य मानव जन्म को रत्न का मूल्य न जानने वाले बच्चे की तरह गोली के खेल की भाँति सुखों, भोगों और जलसों में लगा देते हैं और अंत में शरीर छोड़ देते हैं।

परंतु जिन लोगों ने इस शरीर का मूल्य समझ लिया है, वे इस शरीर का उपयोग करके ध्यान करते हैं, ज्ञान प्राप्त करते हैं, जीवन में अनेक लाभ प्राप्त करते हैं और अंततः दैव-स्वरूप बनकर उन्नत होते हैं।”

संसार में अधिकांश लोगों को इस शरीर का मूल्य नहीं पता। मानव जन्म की महानता समझ में नहीं आती। प्राचीनों ने कहा है कि मानव जन्म दुर्लभ है; वह इतनी सहजता से नहीं मिलता।

पत्रीजी ने भी कहा है। विकास-क्रम में अनेक प्रकार के कीट-जन्य जन्म, जलचर जन्म, पक्षी जन्म, पशु जन्म इन सबको पूर्ण करने में करोड़ों वर्ष लगते हैं। उनके बाद ही मानव जन्म प्राप्त होता है। अर्थात् चौरासी लाख प्रकार की जीव-राशियों की तुलना में मानव जन्म कितना महान है यह समझा जा सकता है।

जिस प्रकार रत्न मिलने पर भी बच्चे को उसका मूल्य नहीं पता, वह उसे गोली मानकर थोड़ी देर खेलकर फेंक देता है उसी प्रकार मानव

जन्म प्राप्त होने पर भी इस जन्म का मूल्य न समझकर अधिकांश लोग इसे केवल सुख पाने, भोग करने, मनोरंजन, जलसे, मद्यपान आदि में लगा देते हैं और अंत में शरीर छोड़ देते हैं ।

अधिकांश लोग तमोगुण और रजोगुण में रहते हैं । अर्थात् पृथ्वी पर तमोगुण में रहने वाले लगभग 60% और रजोगुण में रहने वाले लगभग 30% कुल मिलाकर 90% लोग इस शरीर का उपयोग इसी के लिए करते हैं ।

परंतु बहुत ही कम लोग मानव जन्म की महानता को समझकर, इस शरीर से “ श्वास पर ध्यान ” ध्यान करते हैं, अब्धुत ज्ञान प्राप्त करते हैं, जीवन में अनेक लाभ पाते हैं और अंत में मानव जन्म के लक्ष्य दैव-स्वरूप बनना की ओर उन्नत होते हैं, पूर्णात्मा बन सकते हैं ।

इसलिए आपका जीवन रत्न का मूल्य न जानने वाले बच्चे जैसा नहीं होना चाहिए । यदि रत्न का मूल्य समझ में आ जाए, तो उसे सँभालकर रखते हैं और अनेक प्रकार से उपयोग करते हैं; जीवन में बहुत लाभ प्राप्त करते हैं ।

उसी प्रकार, प्राप्त हुए इस मानव जन्म की महानता को समझकर, इस शरीर की महान शक्ति को जानकर, इसका उपयोग करके ज्ञान प्राप्त करना चाहिए ।

यदि आपने पत्नीजी को ध्यान से देखा हो, तो आपने देखा होगा कि कक्षाओं में, मंच पर या अन्यत्र अनेक लोग उनसे अनेक प्रकार के इंटरव्यू करवाते थे । वे अपनी समस्याओं और शंकाओं के विषय में प्रश्न पूछते थे । कोई भी प्रश्न पूछें अंत में वे यही कहते थे ध्यान कीजिए । कोई

लाभ चाहिए तो ध्यान कीजिए। कोई समस्या दूर करनी है तो ध्यान कीजिए। हर विषय में वे “श्वास पर ध्यान” ध्यान ही कहते थे।

तभी मुझे समझ में आया कि किसी भी लाभ के लिए ध्यान के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। उन्होंने यह भी कहा कि ध्यान के द्वारा ही ज्ञान आता है। अर्थात् अमूल्य ज्ञान प्राप्त करना है तो ध्यान करना ही होगा। और ज्ञान प्राप्त होने पर जीवन में होने वाले लाभों के विषय में हमने अनेक प्रकार से कहा है। ज्ञान केवल सुख और शांति ही नहीं देता; ज्ञान प्राप्त होने से जीवन का लक्ष्य सिद्ध करने में भी अत्यंत सहायता होती है।

क्योंकि ज्ञान प्राप्त होने पर व्यक्ति किसी वस्तु की लालसा नहीं करता। इच्छाओं को नियंत्रण में रखता है। जो है, उसमें संतोष से जीता है और दूसरों को थोड़ा-बहुत बाँटता है। सृष्टि का रहस्य सब एक है यह समझता है।

वह विचार करता है मैं कौन हूँ? मैं कहाँ से आया? किस उद्देश्य से आया? मेरे आसपास के लोगों और मेरे बीच वास्तव में क्या संबंध है? यह जीवन क्या है? संसार में लोग विविध समस्याओं और विविध कष्टों में क्यों हैं? इसका कारण क्या है? जैसे बुद्ध के मन में विचार आया था थोड़ा ज्ञान प्राप्त होने पर वैसा विचार आपको भी आता है।

हर समय यह सोचते रहना नहीं कि कैसे खाएँ, कैसे पिऊँ, कैसे सुख भोगें। बच्चे को गोली मिली तो उसने उसे पत्थर समझकर थोड़ा खेलकर फेंक दिया। उसी प्रकार, यह शरीर कुछ समय रहेगा और फिर चला जाएगा यह मानकर, जितने दिन है उतने दिन सुख भोगें ऐसा सोचकर, जितने प्रकार से संभव हो उतने प्रकार से सुख भोगने के लिए धन कमाने

में अधिक समय लगाकर, कमाए हुए धन को सुख-भोग में लगा देते हैं और जीवन वैसे ही बिताते हैं।

यदि ऐसे ही बिताएँ, तो क्या होता है ? देखिए बच्चा बड़ा होने में कितना समय लगता है ? बड़ा होकर युवावस्था में आने में कितना समय ? विवाह करके गृहस्थ अवस्था में आने में कितना समय ? वृद्धावस्था में प्रवेश करने में कितना समय ? अंत में शरीर छोड़ने में कितना समय ? इस प्रकार जन्म व्यर्थ कर देते हैं।

इसके विपरीत, यदि इस शरीर का उपयोग करके ज्ञान प्राप्त किया जाए, तो मूल्य से परे दैव-स्थिति प्राप्त की जा सकती है। जीवन का मूल्य समझने वाला अर्थात् थोड़ा ज्ञान प्राप्त करने वाला वह कार्य नहीं करता जो नहीं करने चाहिए; वही करता है जो करने योग्य हैं। इतना ही नहीं, वह लोक-कल्याणकारी कार्यक्रम चलाता है, उन्हें प्रोत्साहित करता है, उनका सहयोग करता है। वह यह भी देखता है कि जो वह कर रहा है, वह धर्म है या नहीं। अपने विषय में लोग क्या सोचते हैं इसकी परवाह नहीं करता।

वह अरीषड्वर्ग को नियंत्रण में रखता है, त्रिकरण-शुद्धि से जीता है, धर्म का आचरण करता है। जीवन में आने वाले द्वंद्वों में शीत-उष्ण में, जीत-हार में, निंदा-स्तुति में, सुख-दुःख में, मान-अपमान में समस्थिति में रहता है; वाणी पर जागरूकता रखता है।

वह सृष्टि के अनुरूप जीता है, सृष्टि के निर्णय का सम्मान करता है। वह जानता है कि सृष्टि द्वारा लिया गया प्रत्येक निर्णय सही है। यहाँ आपको एक बात समझनी चाहिए सृष्टि में अनेक परिवर्तन और अनेक

घटनाएँ होती रहती हैं; प्रत्येक के पीछे कारण होता है। बिना कारण कुछ नहीं होता।

बाढ़ आए, वर्षा हो, जलाने वाली धूप पड़े, असह्य ठंड हो ऐसे परिवर्तन जितने भी हों जो सह नहीं पाते वे गाली देते रहते हैं, चिड़चिड़ाते रहते हैं। प्रकृति कोई अलग वस्तु नहीं है; वही साक्षात् परब्रह्म है। प्रकृति की आलोचना करना परब्रह्म की आलोचना करने के समान है। आपके भीतर इतनी सामर्थ्य है कि आप उसकी आलोचना करें? यह कितना अज्ञान है।

इसलिए जो ज्ञानवान बनना चाहते हैं, उन्हें सृष्टि में जो कुछ भी हो, उसकी आलोचना नहीं करनी चाहिए। यह समझना चाहिए कि सब कुछ सृष्टिकर्ता के निर्णय के अनुसार ही हो रहा है।

इस अनंत जगत में क्या घट रहा है आप क्या जानते हैं? अपने नगर और अपने घर के छोटे से दायरे में जीने वाले आपको कैसे पता चलेगा कि क्या, क्यों हो रहा है? उसने एक योजना के साथ इस सृष्टि की रचना की है। इस सृष्टि के विकास-क्रम में मानव रूप में आने वाले आप हैं। आपको माधव बनने का लक्ष्य दिया गया है।

उसी लक्ष्य को सिद्ध कराने के लिए उसका प्रयत्न चलता है। मनुष्यों की संख्या करोड़ों में है, पर प्रत्येक व्यक्ति का स्तर भिन्न है यह आपको नहीं दिखता। आप मान लेते हैं कि सब मनुष्य एक जैसे हैं; पर उनके व्यवहार विविध हैं। उन्हें उन्नत होना चाहिए; पर वे उन्नति का प्रयत्न छोड़कर अनेक ऐसे काम कर रहे हैं जो नहीं करने चाहिए।

विशेष रूप से पत्नीजी पृथ्वी पर आकर उसी बात को बार-बार

कहते रहे जीव-हिंसा मत करो; मांस-भक्षण छोड़ो। क्यों कहा? क्योंकि वह सृष्टि-विरुद्ध कार्य है। और सबको यह बताने के लिए उनका जन्म किस प्रकार पर्याप्त होता?

इसलिए जब सृष्टि-विरुद्ध कार्य होते हैं, तब लोगों को चेताने के लिए प्रकृति में होने वाले असामान्य परिवर्तन सभी को सोचने पर विवश करते हैं। कोई व्यक्ति बड़ा घर बनाकर सुख से जी रहा हो, और भूकंप आकर घर गिर जाए, सड़क पर आ जाए; कोई करोड़ों वाला भिखारी बन जाए तो क्या वह विचार नहीं करेगा? “मेरी स्थिति ऐसी क्यों हो गई?” क्या भीतर मंथन नहीं होगा?

छोटा कष्ट आए तो वह उसे छोटा मान लेता है। कहता है मनुष्य हैं इसलिए कष्ट आते हैं; या कहता है बुढ़ापे के कारण आते हैं। पर जब बड़ा कष्ट आता है, तो भीतर का मंथन तीव्र होता है। “ओह... मैंने कुछ ऐसे कार्य किए जो नहीं करने चाहिए थे; मैंने हिंसा की; मैंने दूसरों को कष्ट दिया; मैंने अन्य जीवों को पीड़ा पहुँचाई; इसी कारण यह फल भोग रहा हूँ।” फिर वह निर्णय करता है अब कभी ऐसा काम नहीं करूँगा और किसी भी परिस्थिति में वह वह कार्य नहीं करता।

जब वह छोड़ देता है, तब वह एक पायदान ऊपर उठता है। जीवन के अनुभवों से वह अनेक पायदान चढ़ता है। वास्तव में जन्म कर्मों को भोगने के लिए ही लिया जाता है। और यदि कर्म न होते हुए भी पृथ्वी पर आए, तो उसे अवतार कहते हैं। अवतार का अर्थ है लोक-कल्याण के लिए पृथ्वी पर आना। आपको उस स्तर तक पहुँचना है।

अनेक अनुभवों के बाद, बहुत कुछ जानने के बाद, बहुत ज्ञान

अर्जित करने के बाद, अनेक त्रुटियों को सुधारने के बाद वह स्थिति आती है। वास्तव में आप सब भी उसी प्रयत्न में हैं।

मैं निश्चयपूर्वक कहता हूँ आप 60% में नहीं हैं, 30% में नहीं हैं, यहाँ तक कि 9% में भी नहीं हैं। आप 1% में हैं। यदि आप अपनी बुद्धि का सही उपयोग करें, तो आप और भी अनेक सफलताएँ प्राप्त करेंगे। याद रखिए पृथ्वी पर आप शाश्वत नहीं हैं; आपके आसपास की वस्तुएँ शाश्वत नहीं हैं; जिन्हें आप अपना मानते हैं वे भी वास्तव में आपके नहीं हैं; यदि आपने उन्हें अपना मान लिया है, तो वह आपकी भ्रांति है।

इसलिए विशेष रूप से एक बात समझिए आत्मज्ञानी मौसम के परिवर्तन की आलोचना नहीं करता, उसका उल्लेख नहीं करता, उसे पकड़कर नहीं बैठता। यदि आप आलोचना करते हैं, तो समझिए कि आप बहुत अज्ञान में हैं।

यह बात मुझे विशेष रूप से तब समझ में आई, जब शिवप्प नामक व्यक्ति ने कहा पत्रीजी के गीत की रिकॉर्डिंग के लिए आप भी हैदराबाद आइए; आप भी आइए, रिकॉर्डिंग देखिए। तब मैं हैदराबाद गया। वहाँ मुझे कोई नहीं जानता था; मैं सीधे “सर” के घर गया और ऊपर एक कमरे में रहा। उस समय उनके पास कार नहीं थी। पत्रीजी और मैं ऑटो में स्टूडियो जा रहे थे। वे किसी गीत का अभ्यास कर रहे थे।

रास्ते में मैं खाली नहीं रह सका और मैंने कहा धूप मार रही है।” तब उन्होंने कहा क्या आत्मज्ञानी मौसम के बारे में बात करेगा?” बस, वहीं मैं रुक गया। उनके भीतर क्या था मुझे नहीं पता; पर मेरे भीतर गहरा मंथन हुआ। उसके बाद से मैंने प्रकृति के बारे में न आलोचना की,

न शिकायत की। जो भी हो सब अच्छा ही है यह समझ लिया।

अज्ञानी कैसे होते हैं? कपड़े या अन्य वस्तुएँ सुखाने के लिए डालें और वर्षा आ जाए, तो वे गाली देते हैं। पर यदि वर्षा ही न हो, तो स्थिति क्या होगी? वर्षा से ही पौधे जीवित हैं। पौधों के जीवित रहने से ही प्रत्यक्ष और परोक्ष रूप से चौरासी लाख जीव-राशियाँ जीवित हैं। यदि फसल न हो, तो आप कहाँ जीवित रहेंगे? यदि वृक्ष और पौधे न हों, तो पशु कैसे जीवित रहेंगे? यदि पशु न हों, तो मांसाहारी जीव कैसे जीवित रहेंगे? यह सब बने रहने के लिए वर्षा होना आवश्यक है। यदि वर्षा न हो, तो एक-दो वर्षों में पृथ्वी पर जीव-राशि नहीं रहेगी; वह नष्ट हो जाएगी।

विचार कीजिए यह कितना बड़ा खतरा है। अभी सब कुछ उपलब्ध है, इसलिए यह विचार नहीं आता। जब अकाल आता है, तब समझ में आता है। रेगिस्तानी क्षेत्रों में एक घड़ा पानी के लिए कितना संघर्ष होता है देखिए। इसलिए प्रकृति कब, क्या उपलब्ध कराना है उपलब्ध कराती है। कब, कहाँ, किसे, कौन-सा पाठ पढ़ाना है वह पाठ पढ़ाती है।

इसीलिए ये सूनामी, ये भूकंप, ये बाढ़ इन सबके द्वारा सबको सोचने पर विवश किया जाता है। क्या कोई सत्य रूप से जी रहा है? क्या कोई सही है? क्या कोई “सब एक है” यह जान रहा है? क्या कोई ज्ञान प्राप्त कर रहा है? क्या वह उसी प्रकार जीवन जी रहा है? यदि ऐसा जीवन हो, तो ये सब नहीं होंगे। पर आज सभी देशों में स्थिति ऐसी ही है।

इसलिए ज्ञान प्राप्त होने पर व्यक्ति यह सब समझ सकता है। जीवन बदलता है। महान बनता है और अंत में दैव-स्वरूप की ओर उन्नत होता है। रत्न का मूल्य न जानने वाले बालक जैसा नहीं होना चाहिए। इस शरीर का मूल्य समझकर, इसी से ज्ञान अर्जित करके, दैव-स्वरूप बनने का प्रयत्न करना चाहिए।

::7::

“लोहे को मिट्टी का संग मिले तो वह जंग लगकर नष्ट हो जाता है। और वही लोहा आग का संग पाए तो जंग छोड़कर अपने स्वरूप को प्राप्त कर लेता है।

उसी प्रकार, अज्ञानी दुर्जनों के संग से अपना जीवन नष्ट कर लेता है। परन्तु ज्ञानी सज्जनों के संग में ज्ञान पाकर जीवन में अपने स्वरूप को प्राप्त करता है।”

लोहे का मिट्टी के साथ संग होना अर्थात् लोहे का मिट्टी में पड़ा रहना कुछ समय बाद उसमें जंग लग जाती है, और उसका स्वभाव नष्ट-सा हो जाता है। वह पूरी तरह जंग पकड़ लेता है; परत-परत छिलकर गिरती रहती है। पर यदि वही लोहा आग का संग करे, तो थोड़ा-बहुत जंग भी हो, वह छूट जाती है, और वह फिर से अपने मूल स्वरूप को प्राप्त कर लेता है।

इसी प्रकार मनुष्य दो प्रकार के होते हैं ज्ञानी और अज्ञानी। अज्ञानी दुर्जनों के संग में रहते हैं। दुर्जन वे होते हैं जो अनेक गलतियाँ, पाप, और न करने योग्य काम ही करते हैं। उनमें अनेक प्रकार के व्यसन, आदतें, दुर्गुण और बुरे लक्षण होते हैं। उन्हीं के कारण वे अनुचित कार्य करते रहते हैं। यदि कोई व्यक्ति ऐसे दुर्जनों के संग में रहे, तो कुछ समय बाद वह भी वैसा ही बन जाता है।

हम कहते हैं न यदि कोई तीन महीने किसी शराबी के साथ रहे, तो वह भी शराबी बन जाता है। जुआ खेलने वाले के साथ रहे, तो वह भी जुआ खेलने लगता है। चोर के साथ रहे, तो वह चोरी सीख लेता है और

उसी को सही मानने लगता है। इसे “सहवास दोष” कहते हैं। इसलिए बड़े-बुजुर्ग कहते हैं दुर्जनों का संग मत करो।

पर कोई भी मनुष्य यदि सज्जनों के संग में रहे अर्थात् सत्य को जानने वालों के, सत्य में जीने वालों के, सत्य का उपदेश देने वालों के संग में तो वह धीरे-धीरे अपने स्वरूप को जानता है और ज्ञानी बनता है। इसलिए शंकराचार्य ने कहा:

**“त्रिजगति सज्जन संगति रेका
भवति भवार्णव-तरणे नौका।”**

“तरण” अर्थात् पार उतरना। एक तट से दूसरे तट तक जाने के लिए नाव चाहिए। इसी प्रकार मनुष्य को दुःख-तट पार करके आनंद-तट तक पहुँचना है, तो सज्जनों का संग करना चाहिए।

अब आप सब इन तीन दिनों की कक्षाओं में क्यों आते हैं? सत्य जानने के लिए अर्थात् आत्मा को जानने के लिए, “मैं ही आत्मा हूँ” यह जानने के लिए।

रामण महर्षि के पास कोई भी किसी समस्या के साथ आता कष्ट हैं, क्या करें?” तो वे कहते, “पहले यह जानो कि तुम कौन हो।” “रोग हैं” तो भी: “जानो कि तुम कौन हो।” “घर में झगड़े हैं” तो भी: “जानो कि तुम कौन हो।” वे यही एक बात कहते थे। कई लोग सोचते “यह तो बस यही कहता है, ‘तुम कौन हो’ – तो इसके पास जाकर पूछने का क्या?”

क्योंकि रहस्य वहीं है। किसी को समस्या, कष्ट, हानि, दुःख, बाधा कुछ भी हो उसे समझ नहीं आता कि यह क्यों हो रहा है। क्यों होता

है ? क्योंकि उसे सत्य नहीं पता; उसे अपने बारे में नहीं पता कि वह कौन है। यदि वह जान ले, तो ये सब नहीं आते।

इसलिए किसी भी व्यक्ति के जीवन का लक्ष्य यह होना चाहिए कि वह अपने स्वरूप को अर्थात् अपने सत्य स्वरूप को जाने। वह जाने कि “मैं कौन हूँ।” यही रामण महर्षि कहते थे।

क्योंकि वह अपने को देह मान रहा है। पर वास्तव में क्या वह देह है ? नहीं। देह मानने पर सब अलग-अलग दिखते हैं, अलग-अलग ही सोचता है। जाति, धर्म, प्रदेश आदि के आधार पर भेद दिखते हैं। इसी से द्वेष, वैर, कड़वाहट और दीनता जैसी प्रवृत्तियाँ होती हैं।

यदि “सब एक है” यह समझ में आ जाए, तो ऐसा व्यवहार नहीं होता, ऐसे काम नहीं करता। कष्ट आ रहे हैं, संबंध ठीक नहीं हैं तो कारण यही है कि वह नहीं जानता कि वह कौन है; सत्य नहीं जानता; सत्य बताने वालों का संग नहीं करता।

जब दोनों यह समझें कि “मैं देह नहीं, मैं आत्मा हूँ” और “हम दोनों एक हैं” तो वे एक-दूसरे का सम्मान करते हैं। अन्यथा “मैं पति हूँ, मैं पुरुष हूँ” ऐसा मानकर अधिकार और प्रभुत्व जमाने लगते हैं मेरी बात मानो, मेरी ही तरह करो।” और स्त्री “मैं स्त्री हूँ” मानकर दुखी बैठती है मेरा जीवन ऐसा हो गया।” सत्य जानने पर दोनों मित्रता से रहते हैं गृहस्थ जीवन में ही स्वर्ग देखते हैं।

इसलिए कहा गया है सज्जन संगति से बढ़कर कुछ नहीं। इसी कारण आप 27 दिन काम करते हुए, परिवार की जिम्मेदारियाँ निभाते हुए, गृहस्थ सुखों में रहते हुए इन तीन दिनों के लिए सज्जन संगति हेतु भीमावरम

आते हैं। सुबह जूम में 2, 3 घंटे भाग लेते हैं।

आप पत्रीजी के “संसार में ही निर्वाण” के वाक्य को सच में जीते हुए संसार में ही निर्वाण के लिए प्रयास कर रहे हैं। क्योंकि सृष्टि में संसार रहेगा; संसार न हो तो सृष्टि नहीं चलेगी। जितना निर्वाण महत्वपूर्ण है, उतना ही संसार भी महत्वपूर्ण है।

कुछ लोग बच्चों को, संसार को छोड़कर “मैं निर्वाण के लिए जा रहा हूँ” कहकर अति-प्रदर्शन करते हैं। यहाँ “सब छोड़ो” ऐसा किसी ने नहीं कहा। पत्रीजी ने तो बिल्कुल नहीं कहा। उन्होंने ममता छोड़ने को कहा।

इसलिए एक ओर पति कमाए, पत्नी घर संभाले और कुछ समय निर्वाण के लिए भी निकालें। निर्वाण कब आता है? जब व्यक्ति अपने स्वरूप को जान लेता है। दुःख से स्थायी रूप से बाहर निकलने की अवस्था ही निर्वाण है; उसी को मोक्ष कहते हैं। पत्रीजी ने इसके अनेक नाम बताए निश्रेयस, अपवर्ग, लिबरेशन, एनलाइटनमेंट आदि।

यह कब होता है? सज्जनों के संग में। क्योंकि हर किसी ने अपना स्वरूप भुला दिया है। जन्म लेते ही “मैं आत्मा हूँ” यह भूल जाते हैं। पर शरीर छोड़ते समय मृत्यु के बाद वे जान लेते हैं।

जन्म से स्वरूप भूलते हैं। मृत्यु से स्वरूप जानते हैं। स्वरूप भूलने से माया में गिरते हैं। मृत्यु के बाद स्वरूप जान लेने से माया से बाहर आते हैं। वहाँ माया नहीं; वास्तविकता होती है।

यदि मेरे बिना, जीवित रहते हुए ही कोई अपना स्वरूप जान ले, तो वह भी माया को जीतने वाला होता है। माया में रहने तक वह सब उल्टा

करता है जो नहीं करना चाहिए वही करता है; जो विरुद्ध है वही करता है। माया से बाहर आया व्यक्ति वही करता है जो करना चाहिए। माया का अर्थ है जो नहीं है उसे “है” मान लेना।

शरीर है क्या ? नहीं। बच्चे हैं क्या ? नहीं। रिश्तेदार हैं क्या ? नहीं। धन है क्या ? नहीं। पर आप मान रहे हैं कि ये सब हैं यही माया है। “ये सब मेरे हैं” मानना यही माया है। यही शंकराचार्य ने “जाग्रत पंचक” में सावधान किया है।

शंकराचार्य ने बौद्ध प्रभाव वाले भारत में कश्मीर से कन्याकुमारी तक तीन बार पैदल चलकर, हिंदू धर्म को पुनः प्रतिष्ठित किया। इतने शक्तिशाली और ज्ञानी थे। उन्हें सामान्य नहीं समझना चाहिए। भज गोविंदम, विवेकचूडामणि आदि अनेक ग्रंथ लिखकर, अज्ञानियों को ज्ञान की ओर, द्वैत से अद्वैत की ओर ले गए। उन्होंने जो “जाग्रत पंचक” बताया उसे हर किसी को पढ़ना चाहिए।

कई लोग पूछते हैं क्या संसार न करें ? क्या कमाएँ नहीं ?” उत्तर यह है सब होना चाहिए, पर ममता नहीं होनी चाहिए। जितना आवश्यक है उतना कमाओ। और कमाने के बाद इस आध्यात्मिक मार्ग में ज्ञान मार्ग में बढ़ने का प्रयास करो। धन धर्म से कमाना चाहिए।

ममता न हो तो व्यक्ति धर्म से कमाता है। ममता हो तो अधर्म से। ममता हो तो “इसके पास ज्यादा, मेरे पास कम” सोचता है। ममता न हो तो “जिसके पास है वह ज्यादा नहीं, जिसके पास नहीं वह कम नहीं।” वह कहता है उसने अपनी योग्यता के अनुसार कमाया; मैंने अपनी योग्यता के अनुसार” और संतोष से जीता है। ममता वाले को कितना भी हो, तृप्ति

नहीं होती ।

बच्चों पर, पत्नी पर, पति पर ममता हो तो जीवन-शैली एक प्रकार की होती है; ममता न हो तो दूसरी । ममता न होने पर उनके लिए गलतियाँ और पाप नहीं करता; धर्म से जीता है । इसलिए यह समझना चाहिए कि ये सब “न रहने वाली चीजें” हैं भ्रम हैं । यह कब समझ में आता है ? मरने के बाद । पर पहले ही समझकर, उसी प्रकार जीना चाहिए । यह सज्जन संगति से समझ में आता है ।

इसलिए कोई यह नहीं कहता कि गृहस्थ जीवन गलत है । पर अपना समय व्यर्थ मत करो, वाणी व्यर्थ मत करो, इंद्रियों की शक्ति व्यर्थ मत करो आत्मा के लिए समय निकालो । आवश्यकताओं के लिए जीवन चलाओ और जो खाली समय है, उसे इसके लिए लगाओ । नौकरी किए बिना धन नहीं आता; धन के बिना भौतिक जीवन नहीं चलता; और भौतिक जीवन ही न चले, तो आध्यात्मिक साधना कैसे करोगे ? इसलिए वह भी करना है, यह भी करना है ।

इसीलिए यदि आप दुर्जनों के संग में रहेंगे, तो जीवन नष्ट होगा । और यदि सज्जनों का संग करके अपना स्वरूप जान लेंगे, तो जीवन स्वर्ग बन जाएगा ।

“नारियल पानी पी लेने के बाद लोग नारियल को नहीं सँभालते। उसी प्रकार, ब्रह्मानंद-अनुभूति प्राप्त करने वाले देह-सुखों को महत्व नहीं देते।”

यदि आपने रामण महर्षि, शिरिडी बाबा, विवेकानंद या ऐसे किसी भी अनुभूति-प्राप्त महापुरुष को देखा हो, तो स्पष्ट दिखता है कि उन्होंने शारीरिक सुखों को कोई विशेष महत्व नहीं दिया।

क्योंकि शारीरिक सुख “सुख” देता है आनंद” नहीं दे सकता। अब “सुख” और “आनंद” में भेद समझिए: सुख तात्कालिक है। आनंद शाश्वत है। सुख शरीर तक सीमित है शरीर के माध्यम से मन को तृप्त करना ही सुख है। आनंद आत्मा से संबंधित है। सुख का वर्णन किया जा सकता है। आनंद का वर्णन नहीं किया जा सकता उसे अनुभव करना पड़ता है।

सुख तात्कालिक होने के कारण कितना भी सुख मिले मन फिर “और चाहिए” कहता है। आपने पसंद की मिठाई खाई थोड़ी देर तृप्ति रहती है फिर शाम होते-होते या अगले दिन फिर इच्छा उठती है। ए.सी. में लेटे तृप्ति हुई बाहर निकले तो गर्मी फिर ए.सी. में जाना है।

अर्थात् कितने भी सुख भोग लो मन “बस, अब काफी है” नहीं कहता। पर ब्रह्मानंद / आत्मानंद का स्वाद जिसने पा लिया उसके लिए संसार में “अब और क्या चाहिए?” हो जाता है। उसके सामने ये सब छोटा हो जाता है, इसलिए वह इन देह-सुखों को महत्व नहीं देता। वह कहीं भी रहेगा, जैसे भी रहेगा क्योंकि वह इनसे श्रेष्ठ आनंद का अनुभव कर रहा है।

परंतु उस आनंद का स्वाद न जानकर सामान्य लोग सांसारिक सुखों में ही “कुछ है” मानते हैं, और अनुभूति-प्राप्त पुरुषों को “देव” मानकर पूजा करने लगते हैं... जो मैं अभी भोग रहा हूँ, वह पर्याप्त नहीं... मुझे और सुख दो, और संपत्ति दो मैं और भोगूँगा” ऐसी भावना से वे प्रार्थना करते हैं, आराधना करते हैं।

शिरिडी बाबा को देखिए आरती, मन्तें लोग सोचते हैं “उनकी कृपा से थोड़ा-सा ‘शक्ति’ मिल जाए तो हम खूब सुख करेंगे, करोड़ों कमाएँगे, सुविधाएँ जुटाएँगे।” पर यदि बाबा थोड़ी-सी शक्ति दें और लोग महल बनाकर भोग करें तो बाबा के पास जो शक्ति है, उससे वे स्वयं कितने महल बना सकते थे, कितनी सुविधाएँ जुटा सकते थे, कितना भोग कर सकते थे!

फिर बाबा मस्जिद में ही क्यों रहे ? ज़मीन पर क्यों सोए ? जो मिला वही खाकर क्यों तृप्त रहे ? लोग यह सोचते ही नहीं। यदि सच में यह सोच उठे, तो वह व्यक्ति बाबा से “महल” नहीं माँगेगा वह ज्ञान माँगेगा। वह बाबा की तरह बनने का प्रयत्न करेगा। उन्होंने जो पाया उसी को पाने का प्रयास करेगा।

जो महान लोग पाए हैं उसे पाने का प्रयास करने वाला ही वास्तव में भाग्यवान है। आप माँग रहे हैं पर आपको चाहिए वह नहीं। आपको चाहिए वह, जो वे अनुभव कर रहे हैं। आप जिसे माँगते हैं, वह तात्कालिक है उससे वास्तविक लाभ नहीं। शिरिडी बाबा ने “आत्म-साक्षात्कार के नौ सूत्र” बताए वह ब्रह्मानंद-अनुभूति आत्म-साक्षात्कार से आती है। वह आप भी प्राप्त करें।

उसके सामने लोगों का “संतोष” बहुत छोटा है और लोग उसी के लिए तड़प रहे हैं; अनंत के लिए प्रयास नहीं कर रहे। लोग बाबा की कृपा के लिए पहाड़ चढ़ते हैं, पदयात्राएँ करते हैं, वर्षों तक दीक्षा-नियम निभाते हैं। पर यदि वे उन्हीं के बताए मार्ग पर श्रम करें, तो वे वही आनंद पा सकते हैं। ब्रह्मानंद को पाने वाले के लिए फिर “जन्म” नहीं रहता। देह-सुख पाने वाला कितने भी जन्म ले वे सुख तात्कालिक तृप्ति देंगे, शाश्वत आनंद नहीं।

पत्रीजी कहा करते थे: “हर कोई बिरला बनना चाहता है, रिलायंस-अंबानी बनना चाहता है, अदानी बनना चाहता है पर कोई विवेकानंद बनना नहीं चाहता, कोई रामण महर्षि बनना नहीं चाहता, कोई शिरिडी बाबा बनना नहीं चाहता!” क्यों कहा? क्योंकि वे जानते थे लोग सुखों के लिए दौड़ रहे हैं, शाश्वत आनंद के लिए नहीं।

फिर पत्रीजी तीखा प्रश्न करते: “पत्नी-पति से जो सुख मिले हैं क्या तुमने पिछले जन्मों में नहीं भोगे? बच्चों से जो सुख चाहिए क्या पिछले जन्म में नहीं मिला? भोग नहीं किए? सब हो चुके। अब भी तृप्ति नहीं हुई?”

वे कहते थे: “ऐसी चीजें तुम सौ जन्म भी भोगो, तब भी तृप्ति नहीं होगी। तृप्ति चाहिए तो सुख/संतोष नहीं आनंदानुभूति, ब्रह्मानंदानुभूति प्राप्त करो। उससे बढ़कर सृष्टि में कुछ नहीं। वह पा लिया तो ‘फिर कुछ नहीं चाहिए’ हो जाएगा।”

वह अनुभव आए तो व्यक्ति रामण महर्षि की तरह गोची पहनकर भी सहज रहेगा। कैंसर हो पर भी गिनती नहीं। ज़मीन पर सोए तो भी

गिनती नहीं। जो मिले वही खाए, जहाँ रहे वहीं रहे महल नहीं चाहिए किसी वस्तु के प्रति व्यामोह नहीं।

रामण महर्षि के आश्रम की घटना भी यही दिखाती है: एक चोर सोचकर आया कि “यहाँ बहुत धन होगा।” रात में घुसा, पर महर्षि जाग रहे थे।

उन्होंने कहा क्या बेटा, आश्रम की संपत्ति ले जाने आए हो? मैं रहूँगा तो तुम्हें संकोच होगा। मैं बाहर चला जाता हूँ जो चाहिए, जितना चाहिए बाँधकर ले जाओ, तुम चले जाओ तो मैं अंदर आ जाऊँ।”

चोर का मन बदल गया वह चरणों में गिर पड़ा। आश्रम में क्या था? बस गोची। इतने लोग आते-जाते, फिर भी कोई अपेक्षा नहीं। पत्रीजी के पास भी यही देखा गया हो तो उपयोग, न हो तो भी सहज जहाँ हों वहाँ, जैसे हों वैसे चाहिए” नहीं। इसलिए सीख क्या है? हो तो भोगो न हो तो “नहीं है” कहकर रोओ मत।

यही पत्रीजी ने सिखाया: मध्य मार्ग, संसार में निर्वाण, जो है उसमें तृप्ति, तुलना मत करो इत्यादि। और अंत में उपमा को ठीक से पकड़िए: नारियल पानी पीकर नारियल को अलमारी में रखकर कौन सँभालेगा? उसका “काम” हो गया। उसी तरह आनंद मिल गया तो फिर देह-सुख/भोग का क्या काम?

इसलिए ब्रह्मानुभूति/आत्म-साक्षात्कार/निर्वाण प्राप्त लोग सांसारिक सुखों को तुच्छ मानते हैं।

शिरिडी बाबा ने यह भी कहा: यदि पिछले पुण्य से धन-संपदा मिली है तो उसे त्याग-बुद्धि से भोगो अर्थात् आवश्यकता तक उपयोग

करो, शेष लोक-कल्याण में लगाओ ।

और साथ ही जो नहीं है उसके लिए मत तड़पो, दूसरों से ईर्ष्या मत करो, अधर्म से मत कमाओ, चोरी/अन्याय मत करो । यह “तुम्हारा” नहीं सब सृष्टिकर्ता का है, परमेश्वर का है ।

इसलिए निष्कर्ष: कुछ भी “छोड़ो” नहीं ममता छोड़ो । पत्नी, पति, बच्चे, धन कुछ भी शाश्वत नहीं । ये सब तुम्हें ब्रह्मज्ञान/आत्म-साक्षात्कार के लिए अस्थायी रूप से उपयोग करने हेतु मिले साधन हैं । यदि इन्हें ठीक तरह से उपयोग करते हुए कुछ भी व्यर्थ न करके प्रयत्न करोगे, तो लक्ष्य सिद्ध होगा ।

जीवन में कष्ट, समस्या, दुख आएँगे अनेकों कर्मों के कारण । पर यदि यह प्रयास छोड़े बिना चलते रहे कुछ समय बाद वे भी हटेंगे । और यह प्रयत्न बना रहा, तो आगे की जन्म-स्थिति बहुत अनुकूल होगी और अंततः यही अंतिम जन्म भी हो सकता है ।

::9::

“अँधेरे में ही तारे दिखाई देते हैं; कष्टों में ही सत्य प्रकट होता है।”

दिन में तारे दिखाई नहीं देते, परंतु अँधेरा होने पर सारे तारे टिमटिमाते हुए चमकने लगते हैं। उसी प्रकार कष्टों में ही सत्य प्रकट होता है।

अब हम सभी सत्य को अनुभव में लाने का प्रयास कर रहे हैं अर्थात् सत्य को पूर्ण रूप से जानने का प्रयास कर रहे हैं। यही हमारे जीवन का लक्ष्य है। क्योंकि कोई भी हो, उसे सत्यलोक तक पहुँचना ही है। और सत्यलोक तक पहुँचने के लिए सत्य का अनुभव में आना आवश्यक है।

सत्य को आत्मा कहते हैं। केवल यह जान लेना कि सत्य आत्मा है, इससे आपको सत्यलोक की पात्रता नहीं मिल जाती, और आप सत्यलोक के निवासी नहीं बन जाते। सत्य का अनुभव में आना तभी होता है जब आप “मैं आत्मा हूँ” इस प्रकार से जीवन जी सकें। अर्थात् आपके प्रत्येक कार्य में यह भाव होना चाहिए कि वह शरीर के रूप में नहीं, आत्मा के रूप में किया जा रहा है। तभी सत्य का अनुभव प्राप्त होता है।

क्योंकि आप संसारिक जीवन में हैं, संबंध हैं, माया का संसार है इन सबको पार करना होता है। अर्थात् संसार के प्रति, धन के प्रति, सांसारिक सुखों और भोगों के प्रति आसक्ति नहीं होनी चाहिए, किसी के प्रति ममत्व नहीं होना चाहिए।

हर समय आत्मा को ही प्रधानता देनी चाहिए। इसलिए आप जो भी कार्य करें, स्वयं से प्रश्न करें यह शरीर के लिए लाभकारी है या आत्मा

के लिए? यदि शरीर के लिए लाभकारी है तो उसे कम महत्व दें; यदि आत्मा के लिए लाभकारी है तो उसे अधिक महत्व दें। जिस दिन आप ऐसा करने लगते हैं, उसी दिन से आप आत्मा के निकट आ रहे होते हैं। इसके लिए मुझे कौन-सी अवस्था प्राप्त हुई है, मैं कितना आगे बढ़ा हूँ यह किसी से पूछने की आवश्यकता नहीं होती; यह आपको स्वयं स्पष्ट होने लगता है।

थोड़ा-सा व्यवधान आते ही, छोटी-सी आवश्यकता आते ही लोग अपना प्रयास छोड़ देते हैं। “मेरे बेटे की परीक्षाएँ हैं” कहकर भीमावरम के तीन-दिवसीय वर्ग को छोड़ देने वाले बहुत लोग हैं। “हम बेटे के विवाह के संबंध देख रहे हैं” कहकर एक वर्ष से भीमावरम न आने वाले भी हैं। इन्हें कब सत्य का बोध होगा? कितने जन्म लगेंगे? इसका खतरा इन्हें समझ में नहीं आता। सत्य का अनुभव में आना ही सत्यलोक तक पहुँचने का एकमात्र मार्ग है यह समझ नहीं होती।

इसी प्रकार जन्म लेते रहते हैं, कष्ट भोगते रहते हैं, “मेरा जीवन ऐसा हो गया”, “इन्हीं के कारण मुझे यह कष्ट है”, “उनके कारण यह समस्या है” कहते हुए रोते रहते हैं; परंतु इस रोने से बाहर निकलने के लिए सत्य को अनुभव में लाना चाहिए इस दिशा में विचार नहीं करते।

सांसारिक विषयों को महत्व देते हुए आध्यात्मिक उन्नति कैसे होगी? भीमावरम के तीन दिनों के वर्ग के समय ही कोई न कोई कार्यक्रम, कोई न कोई छोटा-सा काम निकल आता है। निकट के लोग ही बुलाते हैं; उन्हें दुःख होगा कहकर “इस महीने नहीं, अगले महीने चलेंगे” कहकर भीमावरम टाल देते हैं।

परंतु यदि आत्मानुभव में रुचि हो तो पहले ही सूचित किया जा सकता है, या पहले जाकर मिलकर आ सकते हैं, या बाद में आने की बात कह सकते हैं। परंतु ऐसा न करके सत्य के निकट कैसे आएँगे? सत्य में कैसे जिएँगे? सत्य में जी रहे हैं यह कैसे होगा? सोचिए।

कहा गया है “अँधेरे में ही तारे दिखाई देते हैं; कष्टों में ही सत्य अनुभव में आता है।”

देखिए जब कोई कष्ट आता है, तो लोग उसे सहन नहीं कर पाते, झेल नहीं पाते। उस समय आपको क्या करना चाहिए? मंदिर जाना, स्वामियों को पकड़ना नहीं; इधर-उधर मन्तें माँगना, मस्जिद जाना, चर्च जाकर प्रार्थना करना नहीं। आपको यह प्रश्न करना चाहिए यह कष्ट मुझे क्यों आया? तब आपको निश्चित रूप से उत्तर मिलेगा।

जिस कष्ट को मैं आज भोग रहा हूँ, वैसा ही कष्ट मैंने अतीत में इस जन्म में या पूर्व जन्मों में किसी अन्य जीव को, किसी अन्य व्यक्ति को दिया होगा। उसी का फल यह कष्ट है यह समझ में आएगा। ऐसा समझ में आने पर आपको दृढ़ निश्चय करना चाहिए कि मैं अब किसी को ऐसा कष्ट नहीं दूँगा। चाहे कुछ भी हो जाए, वैसी गलती फिर नहीं करूँगा। इसका अर्थ है आपने उस गलती को सुधार लिया। जब आप एक-एक गलती को इस प्रकार सुधारते हैं, तब आत्मिक रूप से थोड़ा-थोड़ा आगे बढ़ते हैं।

इसलिए पहले कर्म सिद्धांत को समझना आवश्यक है। तब हर बात स्पष्ट होने लगती है। कोई भी कष्ट आए यह समझ में आता है कि यह मेरे ही पूर्व कर्मों का फल है। तब वैसी गलती दोबारा नहीं करते।

आर्थिक कठिनाइयाँ आएँ तो यह समझ में आता है कि मैंने किसी को धोखा दिया, किसी के साथ अन्याय किया, किसी का अपहरण किया इसी कारण यह स्थिति आई है। तब यह निश्चय करते हैं कि आगे कभी किसी को धोखा नहीं दूँगा, किसी का अपहरण नहीं करूँगा, किसी की वस्तु का लालच नहीं करूँगा। ऐसा निश्चय करने पर वह गलती भी सुधर जाती है और आप और आगे बढ़ते हैं।

इस प्रकार एक-एक गलती के सुधरने से आत्मिक उन्नति होती है। वह गलती कैसे सुधरी? कष्ट आने के कारण। अर्थात् कष्ट में ही उन्नति होती है। आत्मा का विकास होता है। इसलिए पत्नी जी ने कहा कष्ट, हानि और अपमान आत्मिक प्रगति की सीढ़ियाँ हैं।

परंतु अधिकांश लोग छोटा-सा कष्ट आते ही कहते हैं भगवान मुझे ही कष्ट दे रहे हैं, उन्हें मुझ पर दया नहीं है। वे अपने गलत कार्यों को याद नहीं करते। वे मुर्गे-बकरे काटकर खाते हैं, उन पर दया नहीं दिखाते; परंतु भगवान उनसे दया करें यह कैसे संभव है?

वास्तव में लोग कष्ट आने पर यह निर्णय लेते हैं कि अब मैं यह काम नहीं करूँगा। परंतु मैं यह कह रहा हूँ कष्ट आने के बाद निर्णय लेना पर्याप्त नहीं है; गलती करने से पहले ही यह समझ में आ जाना चाहिए कि इस कार्य का परिणाम क्या होगा। यदि आप उस स्तर तक पहुँच जाएँ, तो आप वास्तव में महान हैं। तब इस जन्म में आप कोई गलती नहीं करेंगे।

सामान्यतः पति पत्नी को हल्का समझते हैं; कुछ मामलों में पत्नी पति को भी हल्का समझती है दोनों होते हैं। “हल्का” समझकर कटु वचन कहना, व्यंग्य से थोड़ा-सा कष्ट देना, और उनके दुःखी होने पर

विकृत आनंद लेना ऐसा व्यवहार होता है। परंतु यदि ऐसा करने से पहले ही यह स्मरण हो जाए कि यदि मैं यह करूँगा तो वही परिणाम मुझे फिर भोगना पड़ेगा तो वह कार्य नहीं किया जाएगा, और वह कष्ट नहीं आएगा।

इसलिए गलती करने से पहले ही उसे पहचानने की क्षमता होनी चाहिए। तब आपकी गलतियाँ बहुत कम हो जाएँगी। तब आप आत्मा के निकट आएँगे, लक्ष्य के निकट आएँगे। आपके जन्म कम होते जाएँगे, और उस अवस्था में पहुँचना अंतिम जन्मों में प्रवेश के समान है।

गलती कराने वाला मन है; मन के अनुसार ही कार्य होता है। जब मन किसी कार्य की ओर ले जा रहा हो, तब पहले ही उस कार्य को पहचान पाना चाहिए। यह कैसे संभव है? जब आपके भीतर जागरूकता हो। जागरूकता का अर्थ है जो देख रहा है, उसे भी देख पाना।” देखने वाले को देख पाने की क्षमता ही जागरूकता है; वही आत्मा है।

जिसमें जागरूकता होती है, उसे गलती करने से पहले ही स्पष्ट हो जाता है यदि मैं यह करूँगा तो फिर कष्ट आएगा। इसलिए वह गलती नहीं करता। यह चेतावनी किसी और से नहीं आती; यह प्रत्येक को स्वयं के भीतर से ही ज्ञात होती है। यह जागरूकता किसमें अधिक होती है? तीव्र ध्यान-साधना करने वालों में, और सात्त्विक शाकाहार लेने वालों में।

इसी कारण मैं प्रत्येक महीने भीमावरम आने के लिए कहता हूँ। केवल जूम पर कक्षा सुन लेने से जागरूकता उत्पन्न नहीं होती। तब आप गलतियाँ करते ही रहते हैं और बाद में उनके परिणाम भोगते हैं। जब कष्ट आते हैं, तो कहते हैं “फिर क्यों आ रहे हैं?” इसलिए जान लीजिए जितनी तीव्रता से “श्वास पर ध्यान” के साथ ध्यान करेंगे, उतनी ही आपकी जागरूकता बढ़ेगी।

जागरूकता की विशेषता यह है कि वह गलती के समय ही चेतावनी देती है। जागरूकता कोई अलग वस्तु नहीं है वह आत्मा ही है, अर्थात् भगवान। वही आपके धर्म का निरंतर बोध कराता है। यदि आप इस स्तर तक पहुँच जाएँ, तो आप वास्तव में महान हैं। आप जितनी अधिक जागरूकता को समझते हैं, उतनी ही आपकी साधना दृढ़ होती जाती है।

यदि किसी विवाह में जाने का विचार आए, और यह विचार उठे विवाह में जाकर मुझे क्या मिलेगा? यदि भीमावरम जाकर ध्यान करूँ तो मुझे अर्थात् आत्मा को लाभ होगा; क्योंकि मैं आत्मा हूँ तो विवाह छोड़कर भीमावरम आ जाना यह दर्शाता है कि आपकी जागरूकता सही ढंग से कार्य कर रही है।

इसी प्रकार खाली समय मिलने पर यदि कोई केवल मोबाइल देखने लगे, तो यह बोध होना चाहिए कि मैं समय व्यर्थ कर रहा हूँ। यदि फोन पर अनावश्यक बातें करते समय यह विचार आए कि इसके बजाय कोई अच्छा प्रवचन सुन सकता हूँ या पुस्तक पढ़ सकता हूँ तो समझिए आपकी जागरूकता सक्रिय है।

इसी प्रकार धन खर्च करते समय यदि यह बोध आए कि निरर्थक वस्तुओं पर क्यों खर्च कर रहा हूँ, आत्मा को लाभ पहुँचाने वाले ज्ञान पर खर्च किया जा सकता है तो यह जागरूकता है। कुछ लोग खर्च का बहाना बनाकर भीमावरम नहीं आते, पर बाहर खूब खर्च करते हैं। ऐसे व्यर्थ खर्च को बचाकर आत्मिक लाभ के लिए उपयोग करें सेवा में लगाएँ, उचित पुस्तकें खरीदें, दूसरों को दें। धन का सदुपयोग आत्मा के लाभ के लिए करें।

कई अवसरों पर आत्मा को हानि पहुँचाने वाले कार्य करते समय आत्मा चेतावनी देती है। यदि तब भी बोध न हो, तो इसका अर्थ है कि मन अत्यधिक मलिन है। यदि गलती करने से पहले ही यह समझ आ जाए कि उसका फल फिर भोगना पड़ेगा, और आप उसे न करें तो आप वास्तव में उन्नत जनों में गिने जाते हैं। इसलिए स्मरण रखें “जैसे अँधेरे में तारे दिखाई देते हैं, वैसे ही कष्टों में सत्य प्रकट होता है।”

अतः कष्ट हमारे लिए हितकारी हैं, अहितकारी नहीं। इसलिए कष्टों पर कभी विलाप न करें। कष्ट आने पर यह विचार करें इससे मुझे क्या सीखना है? यह कष्ट मुझे कौन-सा पाठ सिखा रहा है? यदि कष्ट आया है, तो यह किसी गलती का परिणाम है और वह गलती अब नहीं करनी है ऐसा दृढ़ निश्चय करें।

Programs by the Tatavarthy's that will be broadcasted on YouTube:

- a) Channel name: **Tatavarthy Veera Raghava Rao**
This channel has 2,000+ videos featuring messages from Mr and Mrs Tatavarthy.
- b) PMC has also launched a YouTube channel for Brahmarshi Tatavarthy Veera Raghava Rao.
Channel name: **Brahmarshi Tatavarthy Veera Raghava Rao.**
- c) For messages from trainees who have trained under Mr. and Mrs. Tatavarthy, watch the Tatavarthy Spiritual Trainees YouTube channel.
- d) You can also go directly to the YouTube app, type Tatavarthy Veera Raghava Rao in the search bar, and watch all the Mr. and Mrs. Tatavarthy videos.

“जिन हवाओं से पेड़ हिलते हैं, वे हवाएँ हमें दिखाई नहीं देतीं; उसी प्रकार अज्ञानी को कर्म-फल ज्ञात नहीं होता।”

जिन हवाओं से पेड़ हिलते हैं, वे हवाएँ हमें दिखाई नहीं देतीं अर्थात् यदि हम ध्यान से देखें तो पेड़ हिलते हुए दिखाई देते हैं। वे क्यों हिलते हैं? हवा के कारण। हवा न हो तो पेड़ नहीं हिलते, डालियाँ नहीं हिलतीं, पत्ते नहीं हिलते, कुछ भी नहीं हिलता। हवा के कारण उनका हिलना दिखाई देता है, परंतु उन्हें हिलाने वाली हवा स्वयं हमें दिखाई नहीं देती।

“उसी प्रकार अज्ञानी को कर्म-फल ज्ञात नहीं होता।” इसका मुख्य कारण क्या है? ज्ञानी वह है जो सृष्टि में आँखों से न दिखाई देने वाली वस्तुओं के विषय में जानता है, जो अदृश्य आत्मा को जानता है, जो ऊपर के लोकों के विषय में जानता है, और जो सृष्टि में घटित होने वाली अनेक बातों को जानता है।

वह यह भी जानता है कि मनुष्य द्वारा किया गया प्रत्येक कर्म आकाशिक रिकॉर्ड्स में अंकित होता है। सृष्टि में विद्यमान सिद्धांत आत्मा सिद्धांत, पुनर्जन्म सिद्धांत, कर्म सिद्धांत, प्रगति सिद्धांत इन सबको जानने वाला तथा उनके परिणामों को जानने वाला ही ज्ञानी है।

इस प्रकार ज्ञानी केवल दृश्य ही नहीं, अदृश्य को भी जानता है; इसलिए वह गलतियाँ नहीं करता, पाप नहीं करता, अधर्म से आचरण नहीं करता, सृष्टि के विरुद्ध व्यवहार नहीं करता। इस कारण ज्ञानी को कष्ट नहीं आते।

परंतु अज्ञानी को ये अदृश्य बातें ज्ञात नहीं होतीं। उसे यह ज्ञात नहीं होता कि “मैं आत्मा हूँ”; वह दिखाई देने वाले शरीर को ही स्वयं मानता है। उसे सृष्टि के सिद्धांतों और धर्मों का ज्ञान नहीं होता। वह उनकी उपेक्षा करता है। उसका ध्यान केवल कमाने और भोगने पर ही रहता है।

इन सिद्धांतों और धर्मों का ज्ञान न होने के कारण, उनके परिणाम क्या होते हैं यह समझे बिना, वह अपनी इच्छा के अनुसार जीवन जीता है, अधर्म से कमाता है, भोग करता है और उसी को जीवन मान लेता है। इसलिए अज्ञानी को कष्ट आते रहते हैं।

जिस प्रकार पेड़ों को हिलाने वाली हवा हमें दिखाई नहीं देती, उसी प्रकार अज्ञानी को अपने कर्मों का फल ज्ञात नहीं होता। वह पाप कर देता है; जब कष्ट आता है तो वह उसका कारण किसी और को मानता है। वह यह नहीं मानता कि यह उसके अपने कर्म का फल है; वह किसी अन्य को दोष देता है यही अज्ञानी की स्थिति है। अज्ञानी को केवल कर्म-फल ही नहीं, और भी अनेक बातें ज्ञात नहीं होतीं।

उसे यह भी ज्ञात नहीं होता कि “मैं आत्मा हूँ।” यह न जानकर वह शरीर को ही स्वयं मानता है; शरीर-सुख और शरीर-आनंद के लिए अनेक ऐसे कार्य करता है जो नहीं करने चाहिए, और कष्ट अर्जित करता है। आत्मा का ज्ञान न होने के कारण वह सबको अलग-अलग मानता है, दूसरों से द्वेष करता है, छल करता है, स्वयं को महान मानना चाहता है। अंततः ये सब दुःख ही उत्पन्न करते हैं।

इसके अतिरिक्त अज्ञानी को पुनर्जन्म सिद्धांत का भी ज्ञान नहीं होता। वह नहीं जानता कि मनुष्य फिर एक और जन्म लेता है; वह मृत्यु

को ही जीवन का अंत मानता है। इसलिए कष्ट आने पर उनसे बचने के लिए, उनसे निकलने के लिए, आत्महत्या तक कर लेता है। जिस प्रकार पेड़ों को हिलाने वाली हवा हमें दिखाई नहीं देती, उसी प्रकार ये सब बातें अज्ञानी को ज्ञात नहीं होतीं।

परंतु ज्ञानी को ये सब ज्ञात होता है। इसलिए कितने भी कष्ट आएँ, वह सहन करता है; आत्महत्या नहीं करता। वह जानता है कि ये कष्ट उसके ही पूर्व कर्मों के कारण आए हैं; कुछ समय धैर्य रखने पर कर्म का प्रभाव समाप्त हो जाएगा। वह सहन करता है और कष्ट से बाहर निकल आता है।

अज्ञानी स्त्री होने पर दुःखी होता है और पुरुष होने पर गर्व करता है। परंतु ज्ञानी स्त्री होने पर दुःखी नहीं होता और पुरुष होने पर गर्व नहीं करता। वह जानता है कि यह सब अस्थायी है; कुछ समय बाद इस शरीर को छोड़ना ही है। जो अब पुरुष है, उसे फिर स्त्री के रूप में जन्म लेना पड़ेगा; जो अब स्त्री है, उसे फिर पुरुष के रूप में जन्म लेना पड़ेगा। यह कुछ भी शाश्वत नहीं है। इसलिए वह न दुःखी होता है, न गर्व करता है सामान्य रूप से जीवन जीता है।

वह स्त्री के रूप में जो प्राप्त करना है, उसे जानकर उसे प्राप्त करने का प्रयास करता है। पुरुष के रूप में जो-जो पाठ सीखने हैं, उन्हें जानकर उन्हें सीखने का प्रयास करता है।

पत्री जी ने ज्ञानी के लक्षण और अज्ञानी के लक्षण बताए हैं। उन्होंने कहा

ज्ञानी दुःख में भी आनंद में रहता है, ” अर्थात् कष्ट के समय में

भी आनंद में रहता है; परंतु “अज्ञानी उस समय भी दुःखी रहता है जब उसे आनंद में होना चाहिए।”

इसका मुख्य कारण क्या है ? ज्ञानी के पास अपार शक्ति होती है, जबकि अज्ञानी के पास उतनी शक्ति नहीं होती। ज्ञानी में शक्ति अधिक क्यों होती है और अज्ञानी में कम इसे समझना चाहिए।

देखिए जो तमोगुण और रजोगुण में रहते हैं, वे अज्ञान में ही रहते हैं; उनमें शक्ति बहुत कम होती है। वही लोग जब “श्वास पर ध्यान” का अभ्यास करते हुए विचार-रहित अवस्था तक पहुँचते हैं, तब शक्ति बढ़ती है। महीनों और वर्षों तक ऐसा ध्यान करने पर उनकी शक्ति अपार रूप से बढ़ती जाती है।

शक्ति बढ़ने के साथ अनेक परिवर्तन होते हैं। मन शुद्ध होता है, गुण बदलता है। तमोगुण और रजोगुण में रहने वाले लोग शक्ति बढ़ाकर इन दोनों गुणों से बाहर निकलते हैं और सत्त्वगुण में आते हैं। सत्त्वगुण में आने पर वे ज्ञान प्राप्त करने का प्रयास करते हैं और अदृश्य को जानने के लिए शक्ति बढ़ाने हेतु और भी तीव्र साधना करते हैं।

इस प्रकार सत्त्वगुण से शुद्ध सत्त्वगुण में, और क्रमशः और भी तीव्र साधना से शुद्ध सत्त्व से निर्गुण अवस्था की ओर बढ़ते हैं। यहाँ ध्यान दें शक्ति बढ़ने पर ही गुण बदलता है। जितनी शक्ति होती है, वैसा ही गुण होता है। अपार शक्ति बढ़ने से जब निर्गुण अवस्था प्राप्त होती है, तब उनका ज्ञान भी बढ़ता जाता है।

सत्त्वगुण में बुद्धि तीव्र होती है; निर्गुण अवस्था में पहुँचे लोगों को ज्ञान प्राप्त होता है। क्योंकि निर्गुण अवस्था में स्थित व्यक्ति आत्म-

स्थिति में होता है। आत्मा अर्थात् भगवान। भगवान अपार ज्ञान-संपन्न हैं, इसलिए वह ज्ञान उनमें प्रकट होता है। इसी कारण वे ज्ञानी बनकर अदृश्य बातों को भी जानकर सुसंगत जीवन जीते हैं।

यदि शक्ति न बढ़े तो व्यक्ति तमोगुण और रजोगुण में रहते हुए अनुचित कार्य करता है और कष्ट अर्जित करता है। छोटा-सा कष्ट या समस्या आने पर ही वह सहन नहीं कर पाता और टूट जाता है। परंतु जिसके पास शक्ति होती है, वह आकाश टूटकर गिर पड़े तब भी, कितनी भी भयावह समस्याएँ आएँ, धैर्यवान रहता है।

इसलिए जिसने अपार शक्ति अर्जित की है, वही ज्ञान प्राप्त करता है और ज्ञानी बनता है। कष्ट आने पर वह जानता है कि ये कष्ट उसके ही पूर्व कर्मों के कारण हैं। वह यह भी जानता है कि जब तक कर्म शेष हैं, तब तक कष्ट रहेगा; कर्म समाप्त होने पर वह कष्ट से मुक्त हो जाएगा। तब उसे वह कष्ट कष्ट जैसा नहीं लगता। इसलिए वह किसी से नहीं डरता, दुःखी नहीं होता निर्भय और साहसी रहता है।

परंतु अज्ञानी को कर्म-फल ज्ञात नहीं होता, सृष्टि के नियम और सिद्धांत ज्ञात नहीं होते, उसमें शक्ति नहीं होती। इसलिए छोटा-सा कष्ट आने पर भी वह व्याकुल हो जाता है और “यह जीवन ही क्यों?” कहकर दुःखी हो जाता है।

इसीलिए आत्म-ज्ञानी दुःख में भी आनंद में रहता है, जबकि अज्ञानी उस समय भी दुःखी रहता है जब उसे आनंद में होना चाहिए।

अतः अज्ञान में न रहें ज्ञान अर्जित करें। ज्ञान की महानता को प्रकट करने के लिए ही यह उपमा कही गई है। यह ज्ञान शक्ति के बढ़ने के

साथ आता है। और शक्ति बढ़ाने का एकमात्र मार्ग “ श्वास पर ध्यान ” है।

सृष्टि में आँखों से दिखाई देने वाली अनेक वस्तुएँ हैं। उन्हें जितना अधिक जाना जाए, उतना ही दुःख से मुक्ति मिलती है; ज्ञान प्राप्त करने का प्रयास होता है; दुःख होते हुए भी व्यक्ति आनंद में रहता है। ज्ञान बढ़ने के साथ किए गए कर्मों का बंधन क्षीण होता जाता है।

पत्नी जी ने कहा हर व्यक्ति स्वयं अपने यथार्थ का सृष्टिकर्ता है,” और “प्रत्येक को स्वयं ही अपना उद्धार करना होता है।” एक व्यक्ति दूसरे का उद्धार नहीं कर सकता यह अज्ञानी को ज्ञात नहीं होता। परंतु ज्ञान प्राप्त होने पर ये सब बातें स्पष्ट हो जाती हैं। इसलिए ज्ञान प्राप्त करने का प्रयास करें।

To subscribe to Tatavarthi's YouTube channel:

When you click the YouTube link sent in the WhatsApp group, it will open the Tatavarthi Veera Raghava Rao channel. Once open, you will see the "Subscribe" button-click on it to subscribe. By clicking the bell icon next to it, you can receive notifications of new videos everyday.

Otherwise, visit www.tst.org.in/videos/ Click on "Tatavarthi Veera Raghava Rao" in Section I, or on the names in sections II & III. This will open the respective channels. Once open, click the "Subscribe" button, and by pressing the bell icon next to it, you can get daily video updates.

::11::

“यदि जड़ में कीड़ा लग जाए तो वृक्ष का विकास नहीं होता, फल नहीं देता। वैसे ही ज्ञान न हो तो मनुष्य उच्च दशा को नहीं पहुँचते, पतन हो जाता है।”

हमारे पास फल देने वाले अनेक वृक्ष हैं आम, जामुन, चीकू, सीताफल, सेब आदि। वे अच्छी तरह बढ़ें तो बहुत फल देते हैं। लेकिन कितना भी बड़ा वृक्ष हो, यदि उसकी जड़ों में कीड़ा लग जाए तो वह बढ़ता नहीं। धीरे-धीरे उसे जो सार चाहिए वह नहीं मिलता। वह कीड़ा जड़ों को खा जाता है। वृक्ष के बढ़ने के लिए जो चाहिए, वह उसे न मिले तो वह वृक्ष फल नहीं देता।

इसी तरह मनुष्य यदि ज्ञान नहीं प्राप्त करते तो उच्च दशा को नहीं पहुँचते अर्थात् आध्यात्मिक रूप से ऊँची स्थिति में नहीं पहुँचते, आत्म-पर से नहीं बढ़ते। यहाँ कोई भी व्यक्ति आध्यात्मिक रूप से ऊँची स्थिति में पहुँचना चाहता है तो ज्ञान चाहिए। ज्ञान कितना महत्वपूर्ण है, कितना प्रमुख है यह इस उपमा से समझ में आता है।

हर मनुष्य के लिए दो प्रकार के जीवन हैं इह-लोक का जीवन और पर-लोक का जीवन। इह में सुख-शांति होनी चाहिए, पर में ऊर्ध्व लोकों तक पहुँचना चाहिए। तब वह बहुत महान व्यक्ति के रूप में कीर्तित होता है।

वृक्ष फल देता है तो वे बहुतों के काम आते हैं। दुनिया में सब लोग उन फलों को खाकर भूख मिटाते हैं, उनका स्वाद लेते हैं, बहुत तृप्त होते हैं। इस तरह वृक्ष जगत के लोगों का बहुत उपकार करते हैं। केवल

मनुष्य ही नहीं, पशु भी इन फलों पर जीवित हैं। आप देखिए बंदर, पक्षी, अनेक प्राणी वृक्षों पर लगाने वाले फलों पर ही जीते हैं।

आप ध्यान दें तो बड़े-बड़े योगी, जो हिमालय में साधनाएँ करते थे, वे भी वृक्षों से मिलने वाले फल, कंद-मूल खाकर जीवित रहते थे।

मैं सोचता था यहाँ हम गाँवों-शहरों में हों तो सब कुछ मिल जाता है; पर हिमालय चले जाएँ तो वहाँ क्या मिलता होगा? वे कैसे जीते होंगे? पर कुछ पुस्तकों में मैंने पढ़ा कि वे वहाँ जाने के बाद, वहाँ रहने वाले लोगों से यह जान लेते थे कि क्या खाएँ तो ठीक से जीवित रहकर अपनी साधना जारी रख सकें। ऐसे ही अनुकूल वातावरण में, जहाँ ये चीजें मिलें, वे बसते थे।

विशेष रूप से साधकों के लिए पानी बहुत आवश्यक है। कुछ लोग पहाड़ों पर तपस्या करते थे अर्थात् साधना करते थे। सचमुच पानी के लिए इतना पहाड़ चढ़ना-उतरना कोई साधारण बात नहीं, बहुत कठिन है। तब वे कैसे अपना निर्वाह करते थे? कैसे साधना करते थे? यह मुझे प्रश्न लगता था।

पर कुछ स्थानों पर मैंने देखा इतने ऊँचे पहाड़ पर भी पानी रहता था। वह कुएँ जैसा होता है। वह खोदा हुआ नहीं, स्वाभाविक रूप से बना हुआ था। वहाँ पानी हमेशा रहता है वह वहाँ कैसे आता है, आश्चर्य ही है!

इसी प्रकार कुछ लोग पहले पानी देखकर ही आश्रम स्थापित करते हैं। वह न हो तो निर्वाह नहीं हो सकता। ऐसे साधक इन वृक्षों से फल प्राप्त करके शरीर को टिकाए रखते, तीव्र साधनाएँ करते, और महान बन सके। यदि ये वृक्ष न हों तो मनुष्यों ही नहीं, पशुओं का भी जीना कठिन है।

इस प्रकार वृक्ष विकसित होकर संसार में अनेक जीवों का बहुत उपकार करते रहते हैं ।

इसी प्रकार ज्ञान प्राप्त करने वाले मनुष्य इह में भी उपकार करते हैं, और पर में भी उपकार करते हैं । हमारे लिए प्रत्यक्ष उदाहरण पत्रीजी ही हैं । उन्होंने अपने जीवन का उपयोग केवल लोक-कल्याण के लिए किया । उन्होंने बहुत ज्ञान प्राप्त किया । ज्ञान प्राप्त करना अर्थात् सब कुछ जानना ।

और बुद्ध, रमण महर्षि, पत्रीजी ऐसे बड़े-बड़े लोग, महा-ज्ञानी मनुष्य के दुःख का कारण क्या है ? और वह दुःख मिटे तो क्या करना चाहिए ? इन बातों को जानकर, अज्ञान में रहने वाले मनुष्यों को ये बातें बताकर, वे भी दुःख से बाहर निकलकर आनंद से जी सकें ऐसा प्रयत्न करते थे ।

इसलिए लोग ऐसे योगियों के दर्शन करते थे । उनसे संदेश सुनते थे, जीवन में आचरण करते थे, और दुःख से बाहर आते थे । ऐसे महान लोग सृष्टि के धर्मों का उपदेश करते थे । सबको अपने समान ज्ञानी बनाने के लिए बहुत प्रयत्न करते थे । वे स्वयं आनंद में रहते ही थे, पर संसार में सब आनंद में रहें यह उनकी तड़प होती थी । पत्रीजी को देखें तो हमें ये सब समझ आता है ।

मनुष्य सबसे अधिक नुकसान उठाता है, दुःख में पड़ता है जीव-हिंसा के कारण । इसलिए पत्रीजी ने उसी एक बात को पकड़ा । उन्होंने कहा कि मेरे जीवन का पहला लक्ष्य यही है सबसे मांस-भक्षण छोड़ना है, हिंसा छोड़नी है, सबको शाकाहारी बनाना है ऐसा संकल्प लेकर उन्होंने उसके लिए बहुत प्रयत्न किया । उन्होंने नौकरी भी छोड़ दी और लोक-

कल्याण के लिए ही लगे रहे ।

ज्ञान प्राप्त करने वाले लोग इस प्रकार लोक-कल्याण में लगकर, बहुतों का उपकार करके, बहुत ऊँची स्थिति में बढ़ते हैं । इह में सबका सम्मान पाते हैं, सबको प्रसन्न करते हैं, और स्वयं भी प्रसन्न होकर जीते हैं । वे शांति से रहते हैं, और सब शांति से रहें ऐसा प्रयत्न करते हैं । पर में भी वे ऊर्ध्व लोकों को पहुँचते हैं । ऊर्ध्व लोक अर्थात् जन-लोक के ऊपर के तीन लोक मह-लोक, तपो-लोक, सत्य-लोक ।

जो लोग उन लोकों में पहुँचते हैं, वहाँ जाकर भी वे वही काम करते हैं जो पृथ्वी पर करते थे । जन-लोक के नीचे के लोकों में रहने वालों को वे काउंसिलिंग करते हैं । वे कहते हैं पृथ्वी पर जाकर देखो कि तुमने क्या किया । आगे क्या करना है यह भी उन्हें समझाते रहते हैं । लाभ हो ऐसा प्रयत्न वे केवल पृथ्वी पर शरीर में रहते हुए ही नहीं, शरीर न होने पर भी वहाँ भी उपदेश देकर करते रहते हैं ।

उनका उद्देश्य एक ही है सब अच्छे रहें, सब सुखी रहें, सब शांति से रहें । वही उनका उद्देश्य है । प्रकृति भी ऐसे लोगों को ही सराहती है । ऐसे लोगों को ही प्रकृति का सहयोग सदा रहता है ।

पत्रीजी नौकरी छोड़कर यही प्रचार करते हुए घूमते थे । जीविका के लिए उनके पास वेतन ही था । नौकरी छोड़ दी तो वेतन कौन देगा ? फिर भी, वे ये बातें कहते थे, तो जहाँ भी जाते, चार बातें कहने के बाद लोग भोजन कराते, कुछ न कुछ देते और वे उसी तरह जीते थे ।

शुरू में उनके पास पैसे नहीं होते थे । इसलिए वे ट्रेन में जनरल कंपार्टमेंट के टॉयलेट के पास बैठते थे । वे होटल के कमरे में नहीं रहते थे ।

बस-स्टैंड, रेलवे स्टेशन जहाँ सुविधा हो वहाँ सो जाते थे। एक बार ट्रेन में जाते समय उन्हें चाय पीने का मन हुआ। सब पी रहे थे, पर उनकी जेब में पैसे नहीं थे। थोड़ी देर में वहीं पास बैठे व्यक्ति ने दो चाय खरीदी एक उन्हें भी दे दी।

प्रकृति देख-रेख करती है यही है। उन्होंने इतनी सेवा की, सबको ज्ञान बाँटा, सबको प्रसन्न किया, अपना स्वार्थ छोड़ा, अपना सुख छोड़ा, काम कितना भी कठिन हो फिर भी उसी काम में लगे रहे इसलिए बहुत लोग उनके पीछे चले, उनके संदेशों को सराहा। अंत में वे उस स्तर तक पहुँचे कि विमान में यात्रा कर सके।

चाय भी न पी सकने की स्थिति में रहे व्यक्ति को प्रकृति ने कितना सहयोग दिया देखिए। ऐसे हाल में रहते हुए उन्होंने किस प्रकार के प्रोजेक्ट्स ले आए! हमारे पास कितने भी करोड़ हों क्या हम ऐसे प्रोजेक्ट्स बना सकते हैं ?

वे सोचते थे कि किसी चैनल पर दस मिनट या पंद्रह मिनट का इंटरव्यू मिल जाए तो ज्ञान के बारे में कहेंगे। जब कभी कोई चैनल वाले उन्हें बुलाते, तो हमारे लोग संदेश भेजते आज फलाँ समय पत्रीजी का इंटरव्यू है। तब उस समय हमारे लोग चैनल लगाकर देखते।

इस प्रकार भी वे दस लोगों तक संदेश पहुँचे ऐसी तड़प रखते थे। और उनकी तड़प के अनुसार ही प्रकृति ने उन्हें एक चैनल रखने की स्थिति तक पहुँचा दिया। इसे देखकर समझिए।

ये सारे काम उन्होंने क्यों किए? अपार ज्ञान प्राप्त करने के कारण ही वे ये काम कर सके। ज्ञान न हो तो “दस लोगों का भला करना

चाहिए” ऐसा विचार नहीं आता। “मैं ठीक हूँ, बस” इतना ही देखते हैं। “सब ठीक रहें” ऐसी सोच नहीं होती। यह ज्ञान वालों में ही होती है।

इसी प्रकार ऊर्ध्व लोकों में पहुँचने वाले लोग जब पुनर्जन्म लेते हैं, तो अपनी इच्छा के अनुसार जिस प्रकार का जन्म चाहिए वैसा जन्म चुनने का अवसर होता है। केवल भू-लोक में ही नहीं, ऊर्ध्व लोकों में भी ज्ञान के विषयों पर चर्चा करने के लिए ऋषि, महर्षि, योगी, तपः-संपन्न होते हैं।

उनके साथ परिचय होता है। वे पूछते हैं और ऊँचे लोकों में जाना हो, लक्ष्य साधना हो, तो और क्या करना चाहिए? ज्ञान को और कितना बढ़ाना चाहिए? कैसे बढ़ाना चाहिए? पृथ्वी पर जाकर कौन-से काम करने चाहिए? कौन-से काम करें तो और ऊपर के लोकों तक पहुँचने का अवसर होगा? ये बातें उनसे चर्चा करके जान लेते हैं।

एक-दूसरे के विचार, एक-दूसरे का ज्ञान बाँटते हैं। ज्ञानी ही ऊँचे लोकों में पहुँच सकते हैं, इसलिए उनके बड़े कर्म नहीं होते। उनमें कुछ ऐसे भी होते हैं जिन्होंने कर्म-रहित कर लिया है; कुछ ऐसे भी होते हैं जिनके थोड़े कर्म शेष होते हैं। उसी के अनुसार वे जन्म चुनते हैं।

स्त्री-जन्म चाहिए तो स्त्री-जन्म, पुरुष-जन्म चाहिए तो पुरुष-जन्म; जिस परिवार में चाहिए, उसी परिवार में जन्म लेकर वे और-और ऊँचे लोकों में पहुँचते हैं। यहाँ जन-लोक के ऊपर तीन ही बताए गए हैं। “और भी ऊँचे लोक” का अर्थ यह समझना चाहिए कि यदि महा-लोक लें तो वह किसी गाँव में रहने जैसा नहीं, किसी राज्य में रहने जैसा नहीं, किसी देश में रहने जैसा नहीं, किसी एक पृथ्वी पर रहने जैसा भी नहीं।

आप देखिए पत्रीजी ने कहा है कि ऐसी भू-लोक लाखों हैं एक से एक ऊपर। इसी प्रकार पर में भी अनेक प्रकार के लोक होते हैं। और उस महा-लोक में जाकर, जब-जब पृथ्वी पर आते हैं, तब-तब और ऊँचे लोकों तक पहुँचने का प्रयत्न करते रहते हैं।

वहाँ से तपो-लोक में जाते हैं। वहाँ भी अनेक लोक होते हैं। उनमें ऊँची स्थिति को पहुँचते हैं। अंत में सत्य-लोक में पहुँचने की योग्यता प्राप्त करते हैं।

इसलिए इतनी ऊँची दशा में पहुँचना है तो निश्चित रूप से ज्ञान प्राप्त करना अनिवार्य है। पृथ्वी पर आना केवल “खाना, पीना, सोना” के लिए नहीं है। स्वाभाविक रूप से अधिकतर लोगों को ये बातें पता नहीं होतीं। ज्ञान नहीं होता। इसलिए वे क्या समझते हैं? अच्छा पढ़ो, अच्छा कमाओ, शादी करो, बच्चे पैदा करो, सुख से रहो यही जीवन है।

पृथ्वी पर रहते हुए ऐसा ही लगता है। पर ऊपर जाने के बाद समझ आता है। वहाँ डाँट पड़ती है तुम क्यों गए थे? क्या करके आए?” पर अज्ञान में रहने वालों को ये बातें पता नहीं होतीं। ज्ञान प्राप्त करके और ज्ञान बढ़ाने के लिए जो पृथ्वी पर आए हैं, वे छोटे हों तब भी माता-पिता कितना भी कहें उनमें ज्ञान पाने की तड़प रहती है।

उनकी तड़प माता-पिता समझ नहीं पाते। बच्चे बड़े हो जाएँ तो शादी करना, अच्छी नौकरी पाना, बच्चे पैदा करना, उन्हें अच्छी तरह पालना यही ड्यूटी है ऐसा वे कहते हैं। सृष्टि में ये सब है यह बात उन्हें पता नहीं होती।

जिस गाँव में वे रहते हैं वही उनका संसार है। मरते दम तक

बिना किसी कमी के जीना यही उनका लक्ष्य है। फिर कष्ट आएँ तो वही माता-पिता विलाप करते हैं। समस्या क्यों आई पता नहीं। उससे कैसे निकला जाए पता नहीं। कुछ समझ न आए तो, “जिसका कोई नहीं, उसका भगवान” कहकर पसंद के भगवान को पकड़कर मनौती माँगते, मनौतियाँ उतारते रहते हैं। उनकी इच्छाएँ पूरी हों तो उस भगवान को और मानते हैं; पूरी न हों तो उस भगवान को छोड़कर दूसरे भगवान को पकड़ लेते हैं और भटकते रहते हैं।

पर ज्ञान प्राप्त करने वाले लोग ऐसा नहीं जीते। उनका उद्देश्य उन्हें पता होता है। उनका लक्ष्य क्या है उन्हें पता होता है। कोई कितना भी कहे, उनकी दृष्टि ज्ञान प्राप्त करने पर ही रहती है। जैसे रामकृष्ण परमहंस ने विवेकानंद को प्रभावित किया, वैसे ही हमारे पत्नीजी ने मुझे प्रभावित किया। रामकृष्ण परमहंस ने जो कहा, वही विवेकानंद का उद्देश्य बना। पत्नीजी ने जो कहा, वही मेरे जीवन का उद्देश्य बना।

व्यापार करने वाला मैं, लाखों-करोड़ों कमाने वाला मैं सब छोड़कर ज्ञान-मार्ग में चलना शुरू कर दिया। ज्ञान ही मनुष्य को चाहिए। स्त्री हो, पुरुष हो, वृद्ध हो, बालक हो ज्ञान प्राप्त करने वाला ही महान है। पृथ्वी पर जो है वह शाश्वत नहीं। यहाँ जो कुछ है वह अस्थायी है। कितना भी करोड़पति हो क्षण भर में सब खोने जैसी परिस्थितियाँ भी बन सकती हैं।

अब जापान में देखिए भूकंप, सूनामी। चीन में बाढ़ से बाँध तक बह जाते हैं। अनेक पुल, नगर भी डूब जाते हैं। रूस में, अमेरिका में किस देश में देखिए, स्थिति उथल-पुथल है। प्रकृति-विपर्यय, या युद्ध। बम बरसाकर कितने लाख लोग मर रहे हैं।

अनेक बड़े-बड़े भवन ताश के पत्तों की तरह गिर जाते हैं। उनके जीवन भी वैसे ही गिर जाते हैं। आप सोचते हैं मैं ठीक हूँ, हमेशा ऐसा ही रहूँगा।” पर याद रखिए आप इह में हों या पर में आपको बचाने वाला धन नहीं है। आपको बचाने वाला केवल ज्ञान है। यदि जड़ में कीड़ा लग जाए तो वृक्ष का विकास नहीं होता, फल नहीं देता। वैसे ही ज्ञान न हो तो मनुष्य उच्च दशा को नहीं पहुँचते, पतन हो जाता है। इसलिए ज्ञान प्राप्त करें। पृथ्वी पर भी और पर में भी उच्च दशा में रहें। महान रूप से जिएँ।

Information available on Tatavarthy's website:

Website address: www.tst.org.in

a) Details of programs conducted under the guidance of Mr. and Mrs. Tatavarthy and Google Maps location are available.

b) All books by Mr. and Mrs. Tatavarthy are available in PDF format for free download in Telugu, Kannada, Hindi, and English languages.

c) All the messages of Mr. and Mrs. Tatavarthy are organized in concept-wise YouTube playlists.

d) Summaries of Mr. and Mrs. Tatavarthy's messages are provided in the form of quotations.

e) The gallery of Mr. and Mrs. Tatavarthy is also available.

For registration of a 3 day free meditation and soul-knowledge training classes held in Bhimavaram on the 1st, 2nd, and 3rd of every month, contact Sindhura, 8555995217.

::12::

“यदि वर्षा का जल ऊसर/बंजर भूमि पर पड़े तो व्यर्थ हो जाता है। वैसे ही कितना भी ज्ञान-बोध किया जाए, कलुषित हृदयों के लिए वह व्यर्थ हो जाता है।”

भूमि के प्रकार होते हैं उपजाऊ भूमि, ऊसर (बंजर) भूमि आदि। ऊसर भूमि में कोई बीज अंकुरित नहीं होता, कोई पौधा नहीं बढ़ता। ऐसी ऊसर भूमि पर यदि वर्षा हो, तो जितनी वर्षा हुई, वह सब व्यर्थ हो जाती है। वही वर्षा यदि उपजाऊ भूमि पर पड़े, तो वर्षा के बिना सूख गई घास, मुरझाए हुए पेड़ भी फिर से कोंपलें निकालकर हरे-भरे होकर बढ़ते हैं। और इस प्रकार घनी-भरी हुई वे वनस्पतियाँ, वृक्ष लोक के लिए, समस्त जीवों के लिए बहुत उपयोगी होते हैं। वह वर्षा व्यर्थ नहीं होती।

इसी प्रकार गुरु, बड़े, योगी मनुष्यों को ज्ञान-बोध करते रहते हैं। वे कितना भी ज्ञान-बोध करें, कितना भी विस्तार से कहें, समझ आने योग्य करके समझाएँ पर जिनके हृदय कलुषित हैं, अर्थात् जिनका मन मैला है दूसरे शब्दों में कहें तो जो तमोगुण, रजोगुण में हैं उन्हें समझ नहीं आता। कितना भी कहें, वह व्यर्थ हो जाता है। कारण क्या है? उस ज्ञान का मूल्य उन्हें पता नहीं होता।

पत्रीजी अधिकतर ज्ञान ही सिखाते थे। कारण यह कि ज्ञान से ही कर्म रहित होते हैं, ज्ञान से ही दुःख से बाहर निकलते हैं, ज्ञान से ही आचरण बदलता है, ज्ञान से ही मुक्ति-कर कर्म होते हैं, ज्ञान से ही मुक्ति प्राप्त होती है यह ब्रह्मज्ञानी पत्रीजी जानते थे।

इसलिए वे चाहते थे कि सब अपना अज्ञान हटाएँ, ज्ञानी बनें।

अवसर मिलते ही ज्ञान-बोध करते थे। पर उनकी सभाओं में, उनसे मिलने अनेक प्रकार के लोग आते थे। उनमें बहुतों को उनका यह ज्ञान-बोध समझ में नहीं आता था। कारण यह कि वे कलुषित-मन वाले थे ऊसर भूमि जैसे।

पत्रीजी का ज्ञान-बोध उन्हें समझ में नहीं आता था। उनकी दृष्टि अधिकतर उनके उपदेश पर नहीं, उनके व्यवहार पर रहती थी। कोई अनुचित काम करे, गलती करे, कार्यक्रमों में बाधा डाले, अनुशासन न माने और पत्रीजी क्रोधित हो जाएँ तो ये ऊसर-भूमि जैसे लोग, अर्थात् कलुषित-मन वाले, बात समझे बिना सोचते इन्हें बड़ा गुरु कहते हैं, फिर इन्हें इतना क्रोध क्यों?’

“हम इनके पास क्या सीखेंगे?’” कहकर वे फिर उनके पास नहीं आते थे। और कभी-कभी उन्होंने कुछ लोगों को मारा भी। तब कुछ और लोग जो वही ऊसर-भूमि जैसे थे यह तो केवल डाँटते ही नहीं, मारते भी हैं, यह कैसा गुरु?’” कहकर उनसे दूर हो जाते थे, उनकी सभाओं में नहीं आते थे।

इसी तरह अनेक समस्याओं, दुःखों से घिरे लोग इतने बड़े गुरु आए हैं” कहकर उनके निकट रहने लगते थे उद्देश्य यह कि उनसे और बहुत कुछ जानेंगे, सीखेंगे। इस तरह करते हुए पुरुष ही नहीं, स्त्रियाँ भी उनके पास आती थीं। तब ये ऊसर-भूमि जैसे लोग सोचते क्या बात है, ये स्त्रियों पर हाथ भी रखते हैं” और दूर हो जाते थे।

पत्रीजी हमारे घर कई बार आए। जब वे आए, तो मेरे परिचित भी बहुत लोग उन्हें देखने आए। उनमें भी बहुतों ने उनका ज्ञान नहीं सुना,

उनका व्यवहार देखा और फिर नहीं आए।

जब कभी ऐसे लोग मुझे मिलते, तो मैं पूछता ध्यान में क्यों नहीं आ रहे ?” कुछ लोग दूसरे कारण बताते; कुछ जो बहुत निकट थे, वे खुलकर कहते अरे बाबा, तुम्हारे गुरु ऐसे हैं।” तब मुझे समझ में आया ये लोग बहुत अज्ञान में हैं, बहुत कम जन्मों वाले हैं। पत्नीजी को समझने के लिए इन्हें अभी बहुत जन्म चाहिए। इसलिए जो रुचि नहीं दिखाते, उन्हें मैं फिर नहीं कहता था।

अब वही स्थिति मेरे साथ आई है। अब बहुत लोग ध्यान में आए हुए ही हैं। मैं ज्ञान-बोध करता हूँ, पर वे ज्ञान-बोध पर ध्यान नहीं देते उनकी पूरी दृष्टि मेरे व्यवहार पर रहती है।

कुछ कहते हैं “इनमें क्रोध बहुत है, सबको डाँटते हैं।” कुछ कहते हैं “ये शाकाहार रैलियों के विरोधी हैं, पिरामिड्स के बारे में नहीं बताते; पत्नीजी तो म्यूज़िक लगाकर कराते थे, ये इसे गलत कहते हैं” इस प्रकार बहुत लोग मेरी कक्षाओं से दूर हो गए।

वे मेरी कक्षाएँ सुनते ही नहीं। ठीक है, पास न आएँ तो भी यूट्यूब पर जो वीडियो हैं, वे सुनें तो उन्हें समझ आएगा; वे भी नहीं सुनते। कारण क्या है? वे सब कलुषित-मन वाले हैं, मलिन मन वाले हैं ऊसर भूमि जैसे।

उनके लिए हम जो ज्ञान कहते हैं, वह समझ नहीं आता। “ये ऐसे क्यों हैं ?” सोचकर दूर हो जाते हैं। पत्नीजी ने एक संदर्भ में कहा था “ये मूर्ख लोग, मैं डाँटता हूँ तो मानते हैं कि मैंने कोई गलत किया; पर मैं क्यों डाँटता हूँ यह नहीं सोचते।”

बीस साल पहले पत्रीजी की कक्षा में एक महिला गोद में छोटे बच्चे को लेकर पहली पंक्ति में बैठ गई। बच्चा बहुत रोता है। बोलने वाले को कितना असुविधाजनक होता है, उनकी एकाग्रता कितनी टूटती है यह कलुषित-मन वालों, ऊसर-भूमि जैसे लोगों को समझ नहीं आता। गुरुजी कठिनाई में हैं यदि वे न कहें तो कौन कहे? पर जब उन्होंने डाँटा, तो उनकी दृष्टि “ये डाँट रहे हैं” इसी पर रही उस महिला की गलती पर नहीं।

ऐसे लोग जो पत्रीजी से दूर हो गए हज़ार नहीं, लाखों भी हैं। अब मेरे मामले में भी यही कर रहे हैं। पर कोई क्या करे, कैसे सोचे मुझे अनावश्यक है। मैं अपना काम करता रहूँगा। जैसे पत्रीजी ने किसी को नहीं गिना, वैसे ही मैं भी किसी को नहीं गिनाँगा। जैसे उपजाऊ भूमि में बीज अंकुरित होते हैं, जैसे वर्षा का जल सदुपयोग होता है वैसे ही जिनमें ज्ञान-रुचि है, उन्हें उपदेश देने के लिए ही मैंने जन्म लिया है। यही मेरी योजना है।

हमारे समाज में ज्ञान-बोध करने वाले बहुत-बहुत कम हैं। पर हर तरह की बातें सिखाने वाले बहुत हैं अनेक प्रकार के ध्यान कराते हैं, शाकाहार रैलियाँ कराते हैं, पिरामिड बनवाते हैं और इन्हीं को पत्रीजी की बात मानते हैं, कहते हैं।

वे किस स्तर पर कहते हैं “आप शाकाहार रैली में भाग लें तो आपके कर्म सब समाप्त हो जाएँगे।” श्रीकृष्ण भगवान ने कहा “ज्ञानाग्नि-दग्ध-कर्माणम्” अर्थात् ज्ञान-रूपी अग्नि में ही कर्म दग्ध होते हैं यह उन्होंने स्पष्ट कहा। पर वे, जैसे सब जानते हों, जैसे ज्ञान हो गाँव के लोगों

को, भोले लोगों को कहते हैं “आप रैली में भाग लेंगे तो कर्म मिट जाएँगे।” तब मुझे समझ आया ये बहुत अज्ञान की स्थिति में हैं; इसलिए हम जो ज्ञान कहते हैं, वह इन्हें समझ नहीं आता। क्योंकि मैं कहता हूँ केवल शाकाहार रैली तक न रुकिए, ज्ञान भी प्राप्त कीजिए। ये प्रचार करते हैं “ये रैलियाँ ही नहीं चाहते।”

अब जिन्होंने हमारे ज्ञान को समझा है, जिनमें ज्ञान-कांक्षा है वे हमें अनुसरण कर रहे हैं। जिनमें नहीं है वे दूर हो रहे हैं। अज्ञान में रहने वाला प्रचार भी करता है समाज में यह स्वाभाविक है; हम कुछ कर नहीं सकते। पत्रीजी जैसे ज्ञान-बोध करने वाले हमारे समाज में कितने हैं? फिर क्या ज्ञान की आवश्यकता नहीं? पत्रीजी ने स्पष्ट कहा “ध्यान से ही ज्ञान, ज्ञान से ही मुक्ति।”

जिनमें ज्ञान-कांक्षा है, वे उपजाऊ भूमि जैसे हैं। ज्ञान-बोध उन्हें अच्छी तरह समझ आता है। वे बहुत बढ़ते हैं; उसी जन्म में ज्ञान बहुत बढ़ाते हैं। वे अपने जन्म का पूरा सदुपयोग करते हैं; जिस उद्देश्य से पृथ्वी पर आए हैं, उसे साध लेते हैं। और कहे तो हमारे पास आने वाले लोग, जितना उन्होंने तय किया था उससे भी अधिक ज्ञान प्राप्त कर रहे हैं एक प्रकार से अतिरिक्त भी पा रहे हैं।

आप कितने भाग्यवान हैं, आत्मा रूप आप कितने महान लोकों को पहुँचेंगे, आगे आपको कितनी महान जन्म-प्राप्ति होगी यह अभी आपको पता नहीं; शरीर छोड़ने के बाद समझ आएगा।

इसलिए जिनमें ज्ञान-रुचि नहीं, उन्हें हमें गिनने की आवश्यकता नहीं। वास्तव में, अम्मा और मैं तीन दिन की कक्षाओं को अधिक महत्व

क्यों देते हैं ? क्योंकि तीन दिन की कक्षाओं में आने वाले सब ज्ञान-कांक्षा वाले होते हैं । इसलिए वे केवल आसपास से नहीं, बहुत दूर से भी आते हैं । वे बहुत रुचि से सुनते हैं, श्रद्धा दिखाते हैं, कही हुई बातें लिखते हैं, घर जाकर मनन करते हैं, पुस्तकें खरीदते हैं । उन्हें कही हुई बातें समझ आती हैं ।

हम दोनों जितना परिश्रम कर रहे हैं, जितनी कोशिश कर रहे हैं वैसा ही उन्हें भी करना चाहिए इस भाव में वे रहते हैं । जितना कर सकते हैं, उतना करने का प्रयास करते हैं । इस प्रकार वे बढ़ते हैं, ज्ञान बढ़ाते हैं, “मास्टर” बनते हैं । मास्टर का अर्थ जिसने ज्ञान बहुत प्राप्त किया ।

जैसे उपजाऊ भूमि पर वर्षा पड़े तो वर्षा का जल कितना सदुपयोग होता है; पौधे, वृक्ष कितने हरे-भरे होते हैं; लोक के कितने काम आते हैं वैसे ही एक सदुरु का ज्ञान-बोध अनेक लोगों को प्रभावित करके, उनमें ज्ञान बढ़ाकर, उन्हें भी लोक-कल्याण में लगने वाला बनाता है । वे स्वयं लाभ पाते ही नहीं उनके द्वारा अनेक लोग लाभ पाते हैं ।

अब देखिए पत्नीजी ने मुझे और अम्मा को तैयार किया । अब हम दोनों आप सबको तैयार कर रहे हैं । अब आप में भी बहुत लोग इस प्रयास में भाग ले रहे हैं । कोई-कोई अनेक कार्य कर रहे हैं । कोई आपका समय व्यर्थ नहीं कर रहा । अपनी-अपनी शक्ति के अनुसार लोग भाग लेकर सेवाएँ कर रहे हैं । इसका मुख्य कारण यही है ज्ञान को समझना ।

इसलिए अम्मा और मैं, जितना संभव हो हर दिन जूम कक्षा को ही प्राथमिकता देते हैं । जिनको ज्ञान समझ नहीं आता, जो रुचि नहीं दिखाते उनके बारे में हमें अधिक नहीं सोचना चाहिए; उन्हें समझाने की

जरूरत भी नहीं। आप सोचेंगे कि किसी तरह समझाकर उन्हें बदल देंगे पर जो लोग आपसे बहस में उतरते हैं, वे मूर्ख हैं; उनसे बहस मत कीजिए।

आपको हर प्रकार के लोग मिलेंगे। पर जिनमें रुचि है, उन्हें कहिए। आपको निरुत्साहित होने की जरूरत नहीं। यदि उनकी आलोचना में कुछ सत्य हो, तो उसे सुधार लें इसमें कोई दोष नहीं। मैं भी यही करता था सब नोट करके बाद में उस पर सोचता था, विश्लेषण करता था।

याद रखिए वर्षा का जल ऊसर भूमि पर पड़े तो व्यर्थ हो जाता है। वैसे ही कलुषित हृदय वालों के लिए कितना भी ज्ञान-बोध किया जाए, वह व्यर्थ होता है यह जान लें।

To watch Tatavarthy's zoom sessions:

a) Silence meditation from **4 am** to **6.30 am** followed by messages related to soul-knowledge from **6.30 am** to **7.30 am**
Zoom ID: **2413823868** Password: **RAO**

b) The above-mentioned Zoom session will also be livestreamed on **YouTube** from **6.30am** to **7.30am**.

c) Those who are in the TVR & TRL WhatsApp group will receive Zoom and YouTube links, along with details about the Tatavarthy's classes. They must save Sindhura's phone number: **8555995217**

d) Those who wish to join the Tatavarthy's WhatsApp group can contact Sindhura: 8555995217, Madhu: 7893917364 or visit www.tst.org.in and click on the "Join WhatsApp Group" link.

::13::

“साधारण यज्ञशाला में यदि छुरी/चाकू से पशु की बलि दी जाए तो नरक मिलता है। वैसे ही शरीर-रूपी यज्ञशाला में ध्यान-रूपी छुरी से अज्ञान-रूपी पशु की बलि दी जाए तो ज्ञान-रूपी अग्नि प्रज्वलित होती है और मोक्ष प्राप्त होता है।”

यहाँ यज्ञशाला की तुलना शरीर से, छुरी/कत्ते की तुलना ध्यान से, और बलि दिए जाने वाले पशु की तुलना अज्ञान से की गई है। ऐसी हिंसा वाले यज्ञ में नरक प्राप्त होता है। पर इस प्रकार के यज्ञ में ज्ञान प्रज्वलित होने से मोक्ष प्राप्त होता है।

पहले से राजे, धनवान लोग, या गुरु यज्ञ, याग करते थे। आज भी करते हैं। इन्हें बड़े पुण्यकर्म मानते हैं। पर यह समझना चाहिए कि वे पुण्यकर्म “काम्य कर्म” हैं। काम्य कर्म अर्थात् इच्छा से किया हुआ कर्म।

राज्य बढ़ाना हो तो अश्वमेध याग, पुत्र चाहिए तो पुत्रकामेष्टि याग, और वर्षा चाहिए तो वरुण-याग करते थे। इन यागों में सामान्यतः किसी देवता की या ईश्वर की उपासना करते थे। अर्थात् उस नाम से मंत्र पढ़कर आज्ञान करते थे। उन्हें लक्ष्य करके यह सब किया जाता था, इसलिए वे देवता प्रसन्न होकर इनकी इच्छा पूरी करके इन्हें संतुष्ट करते थे।

वरुण देव की उपासना करके याग करें तो वरुण देव उस देश में वर्षा कराते थे। तब फसलें अच्छी होती थीं, जल-अभाव दूर होता था, लोग सुख-संतोष से रहते थे। और पुत्रहीन दशरथ महाराज ने पुत्रकामेष्टि याग किया तो उन्हें चार पुत्र हुए।

पर समय के साथ उन यज्ञों में पशुओं की बलि भी देने लगे।

“देवताओं/देवों को प्रिय होगा”, “हमारी इच्छाएँ जल्दी पूरी होंगी” कहकर जीव-हिंसा करने लगे। उस यज्ञ से फल मिलेगा या नहीं, यह अलग बात है; पर अनेक जीवों की हिंसा करने के कारण वे लोग नरक ही जाते हैं। उसका फल बाद में भयानक रूप से भोगते हैं।

ये यज्ञ, याग पुराने समय से परंपरा के रूप में आए हैं। मनुष्य के पुण्यकर्मों में इन्हें बड़े पुण्यकर्म माना जाता है। ऐसे पुण्यकर्मों से अगले जन्म में भोग मिलता है; भोग भोग लेने के बाद वह पुण्य खर्च हो जाता है; फिर वे लोग सामान्य स्थिति में आ जाते हैं।

पर पत्नीजी आए और बोले बेटा, हम सबसे बड़ा यज्ञ करें।” और उसके लिए न अग्नि जलानी है, न यज्ञशाला चाहिए, न साधारण छुरी चाहिए ऐसा कहा।

“तुम्हारा शरीर ही एक महान यज्ञशाला है। उसी का उपयोग करके ध्यान करो। ध्यान-रूपी छुरी से साधारण पशु नहीं अपने शरीर में अज्ञान-रूपी पशु का संहार करो।” जब तुम अज्ञान-रूपी पशु की बलि दोगे, तब ज्ञान-रूपी अग्नि प्रज्वलित होगी। और जैसे-जैसे वह अग्नि प्रज्वलित होगी, वैसे-वैसे तुमने जन्म-जन्मांतरों में किए हुए सभी कर्म दग्ध हो जाएँगे। जब सारे कर्म दग्ध हो जाएँ, तब तुम मोक्ष ही प्राप्त करोगे ऐसा कहा गया।

इसीलिए वे हर वर्ष हम सब से “ध्यान-यज्ञ” कराते थे। उनके द्वारा आयोजित ऐसे महान यज्ञों में हम सब भाग लेते थे। और पिछले बीस वर्षों से भीमवरम में हर महीने 1, 2, 3 तारीख को सैकड़ों लोग मिलकर “श्वास पर ध्यान” वाला सही ध्यान करते हुए एक महान यज्ञ कर रहे हैं।

बहुतों को उसका मूल्य पता नहीं। वे सोचते हैं भीमवरम जाएँगे

तो तीन-चार घंटे ध्यान में आराम से बैठेंगे।” पर वे एक महान यज्ञ में भाग ले रहे हैं यह उन्हें पता नहीं। उसका फल क्या है, उसकी महिमा क्या है यह उन्हें नहीं पता।

कुछ लोग कहते हैं हम भीमवरम नहीं आए, पर लाइव में देख रहे हैं।” पर यज्ञ करने वाला एक है, और दूर से देखने वाला एक है। हम यज्ञ कर रहे हैं, वे लाइव में देख रहे हैं। इससे उन्हें क्या फल मिलेगा? यज्ञ में भाग लेकर ही अज्ञान-रूपी पशु की बलि देकर ज्ञान प्राप्त करके, कर्म-रहित होकर मोक्ष मिलता है। कितना अद्भुत अवसर है! इसलिए मैं कहता हूँ इस अवसर को हाथ से मत जाने दो।

क्योंकि हमारे समाज में यज्ञ तो होते हैं, पर सही ध्यान नहीं होता। सही ध्यान होगा तभी “ज्ञानाग्नि” प्रज्वलित होगी। गलत ध्यान से ज्ञानाग्नि नहीं जलती। ज्ञानाग्नि न जले तो कर्म दग्ध नहीं होते। कर्म दग्ध न हों तो मोक्ष नहीं आता। वे सोचते हैं हमने यज्ञ किया” पर वह फल न देने वाला यज्ञ है। इसी कारण मैं हर महीने “मत छोड़ो” कहकर सबको बताता हूँ।

कुछ लोग कुछ महीने आते हैं, और कहते हैं आए। पर यह नहीं सोचते कि ज्ञानाग्नि प्रज्वलित हुई या नहीं? कर्म दग्ध हुए या नहीं? हमारे लोग इसे “श्री-डेज़ क्लास” कहते हैं, पर यह तीन दिन का “ध्यान-यज्ञ” है। पत्रीजी ने कहा था दस लोग मिलकर करें तो यज्ञ होता है।” पर भीमवरम में हम दस नहीं चार सौ लोग मिलकर करते हैं। फिर वह कितना महान यज्ञ है!

ऐसे यज्ञ में भाग लेने से हम निश्चित रूप से पशु-तुल्य अज्ञान की बलि देंगे। तुरंत ज्ञानाग्नि उत्पन्न होगी। उसी अग्नि में कर्म दग्ध होते

हैं। किसी भी मनुष्य को वही चाहिए, वही साधना है कृष्ण ने भी वही कहा, पत्नीजी ने भी वही कहा। इसलिए “**ध्यान से ही ज्ञान, ज्ञान से ही कर्म-रहितता, और कर्म-रहितता से ही मोक्ष**” ऐसा कहा।

साधारण यज्ञ पुण्य के लिए, इच्छाओं के लिए किए जाते हैं। पर ये ध्यान-यज्ञ ज्ञान के लिए, मोक्ष के लिए किए जा रहे हैं। फिर भी कुछ लोग कहते हैं भीमवरम आएँ तो बहुत काम हैं।” आप सब ये काम अनेक जन्मों से करते आए हैं; ऐसे ही करते रहे हैं। उन जन्मों में पति नहीं थे? पत्नी नहीं थीं? बच्चे नहीं थे? परिवार नहीं थे? सुख नहीं भोगे? मनोरंजन नहीं किया? उन जन्मों में खाना नहीं खाया? पेट भरने के लिए खाना एक बात है; और जैसे कभी खाया ही नहीं, वैसे लालच से खाना दूसरी बात है।

इसलिए अब से कम-से-कम ज्ञान प्राप्त करो। ये सब शरीर की आवश्यकताओं के लिए हैं। इसका अर्थ यह नहीं कि उन्हें छोड़ दो आवश्यकताएँ पूरी करो। पर और कितने जन्म लोगे? ऊब नहीं होती? “बस” भाव नहीं आता? अब तो बाहर निकलें; इसी को अंतिम जन्म बनाएँ; ज्ञान प्राप्त करें; ध्यान-यज्ञों में भाग लें।

शिरडी बाबा ने भी यही कहा। “इसी को अंतिम जन्म बनाने की आकांक्षा”, तीव्र तड़प, वह मुमुक्षुत्व होना चाहिए, कहा। हमने इस अज्ञान-रूपी पशु को खूब पुष्ट करके पाला-पोसा है। अब उसे और पालना नहीं उसकी बलि देकर ज्ञान-रूपी अग्नि प्रज्वलित करो। जैसे यज्ञ में समिधाएँ भस्म होती हैं, वैसे ज्ञान-रूपी अग्नि में अपने सभी कर्मों को भस्म करो।

इसीलिए सही ध्यान-यज्ञों में भाग लो।

::14::

“अगर दीये (प्रमिद) में पानी पड़ जाए तो दीपक नहीं जलता। वैसे ही, हृदय में विषय-वासनाएँ हों तो ज्ञान-ज्योति प्रकाशित नहीं होती।”

आप देखिए एक दीये में तेल डालकर दीपक जलाया जाता है। लेकिन उसमें पानी पड़ जाए तो वह अस्त-व्यस्त होकर जलता है और अंत में बुझ जाता है। फिर जलाना भी कठिन होता है। बाती पानी खींच लेती है, इसलिए दीपक नहीं जलता। दीपक तो तेल से ही जलता है।

वैसे ही मनुष्य के हृदय में विषय-वासनाएँ हों अर्थात् इच्छाएँ हों तो उसमें ज्ञान-ज्योति प्रकाशित नहीं होती। अब देखिए, हम सब रोज पत्रीजी के बताए अनुसार चार काम कर रहे हैं

1. श्वास पर ध्यास रखकर तीव्र ध्यान कर रहे हैं।
2. ज्ञानवर्धक पुस्तकें पढ़ रहे हैं।
3. सत्य के बारे में जानने वाले संदेश सुन रहे हैं।
4. इस ज्ञान-मार्ग में जो-जो सेवा कर सकता है, वह-वह सेवा कर रहे हैं।

हम यह सब किसलिए कर रहे हैं ? अपने हृदय में स्थित ज्ञान-ज्योति को प्रकाशित करने के लिए। क्यों प्रकाशित करनी है ? इस दुःख से स्थायी रूप से बाहर निकलने के लिए। दुःख अनेक प्रकार की समस्याओं से आता है; तो सभी प्रकार की समस्याओं से बाहर निकलना है। क्योंकि दुःख हो तो शांति नहीं होती, और सुख हो तो भी उसका अनुभव नहीं कर पाते।

इसी से बाहर निकलने के लिए हम ज्ञान बढ़ाने का प्रयास कर रहे हैं। ज्ञान बढ़ाने से ही जो कर्म हमें कष्ट देते हैं, उन कर्मों को दग्ध कर

सकते हैं। और यह ज्ञान यदि प्रकाशित होना है तो हृदय में ही प्रकाशित होना चाहिए। कारण भगवान हैं, और भगवान का स्थान हृदय है।

सब लोग पूजा के बाद “मंत्र-पुष्पम” कहते हैं। मंत्र-पुष्पम का अर्थ क्या है? वह यह कहता है कि जिसने इस सृष्टि को रचा है और चला रहा है वह भगवान, वह परब्रह्म प्रत्येक मनुष्य के शरीर में स्थित हृदय में ही है। और ज्ञान उसी के पास है; इसलिए हमें ज्ञान चाहिए तो हृदय में स्थित उसी का आश्रय लेना चाहिए।

हृदय में स्थित उस भगवान का आश्रय लेना है तो हृदय में मलिनताएँ नहीं होनी चाहिए; विषय-वासनाएँ यानी सांसारिक इच्छाएँ नहीं होनी चाहिए। ये हों तो उसका आश्रय नहीं ले सकते। और उसका आश्रय न लें तो मनुष्य में ज्ञान नहीं बढ़ता। कितनी भी भटकन हो, कितनी जगहों पर जाएँ, कितने गुरुओं का आश्रय लें उनमें ज्ञान-प्रकाश नहीं होता।

अतः हृदय में स्थित उस भगवान, अर्थात् आत्मा, का आश्रय लेना चाहिए। आश्रय लेना है तो हृदय शुद्ध होना चाहिए। हृदय शुद्ध होना है तो पहले मन को शुद्ध करना चाहिए। मन जितना शुद्ध होता जाएगा, उतनी हृदय-शुद्धि होगी। और मन को शुद्ध करने का मार्ग वही है जो पात्री जी ने सिखाया “श्वास पर ध्यास” ध्यान।

इसलिए विषय-वासनाएँ, यानी सांसारिक इच्छाएँ इन्हीं को अरिषट्कर्ग में “काम” कहते हैं। इसे नियंत्रण में रखना चाहिए। जब इन इच्छाओं पर आपका नियंत्रण होगा, तब वे आपको हानि नहीं पहुँचाएँगी। ज्ञान बढ़ाने का अच्छा अवसर मिलेगा। इसलिए कोई भी हो इच्छाओं पर नियंत्रण अवश्य रखना चाहिए।

विषय-वासनाओं को नियंत्रण में रखें तभी आपमें ज्ञान-प्रकाश

होता है, पाप-कर्म रहित होते हैं, और जीवन में सुख-संतोष ही नहीं आनंद से भी जी सकते हैं।

याद रखिए केवल करोड़ों होने से कोई आनंदित नहीं हो सकता। बहुत लोग सोचते हैं कि करोड़ों हों तो आनंद होगा; लेकिन जितने करोड़, उतना ही दुःख। हम देखते हैं करोड़ों कमाने वाले फिल्म-अभिनेता, राजनीतिक नेता कितने झगड़े कर रहे हैं, कितने विवाद कर रहे हैं, हर क्षण भय में जी रहे हैं; कौन-सा केस आ जाएगा, किससे हानि हो जाएगी नौद तक नहीं आती।

लेकिन करोड़ों न हों तब भी जो विषय-वासनाओं को नियंत्रण में रख सके वह सुख से सोता है, जीवन में शांति से जीता है; कोई चिंता नहीं, कोई भय नहीं, कोई अशांति नहीं।

वह केवल नियंत्रण ही नहीं रखता उन्हें समाप्त भी कर सकता है। और जो शांति से जी सके, आराम से सो सके वही महान है। पत्रीजी कहते हैं सोने जाते समय ध्यान में बैठिए; धीरे-धीरे “योग-निद्रा” में सरक जाते हैं। योग-निद्रा अर्थात् गाढ़ी निद्रा की अवस्था गहरी नींद में चले जाते हैं। “योग” का अर्थ है मिलन। तो गहरी नींद में किससे मिलते हैं? साक्षात् भगवान से। भगवान के साथ होने वाली अवस्था को ही योग कहते हैं; वह गाढ़ी निद्रा-अवस्था में आती है।

उस अवस्था में शरीर काम नहीं करता, इंद्रियाँ काम नहीं करतीं, अंत में मन भी काम नहीं करता। जब कुछ भी काम नहीं करता, तब जो रहता है वह आत्मा, अर्थात् भगवान। उस अवस्था में रहने वाला अनंत आनंद का अनुभव करता है। ऐसे आनंदानुभव में घंटे मिनटों जैसे बीत जाते हैं। कोई पाँच घंटे सोए, छह घंटे सोए पाँच मिनट सोया-सा लगता है। “अरे, अभी तो सुबह हो गई!” ऐसा आश्चर्य होता है।

नींद ऐसी होनी चाहिए। अशांत नींद भी काम की नहीं। अशांत नींद में सपने आते रहते हैं, मन चलता रहता है। इसलिए पत्नीजी कहते हैं गाढ़ी निद्रा-अवस्था चाहिए तो सोते समय ध्यान में बैठिए।

इससे दो प्रकार के लाभ होते हैं । 1. सोते समय आप उस दैव के साथ रहते हैं, वह शक्ति प्राप्त करते रहते हैं। 2. सोने के बाद बहुत रिलैक्स होते हैं; खोई हुई शक्ति फिर से प्राप्त होती है; आपकी इंद्रियाँ और अंग-प्रत्यंग पूरे दिन बहुत शक्तिशाली होकर काम करते हैं।

अतः हृदय में विषय-वासनाएँ हों तो हृदय में ज्ञान-ज्योति प्रकाशित नहीं होती यही इस उपमा का बड़ा संदेश है।

यह अवस्था चाहिए तो कोई भी हो श्वास पर ध्यास'' रखकर ध्यान करते रहना चाहिए। इस ध्यान से केवल एक लाभ नहीं अनेक लाभ हैं। आप बस आँखें बंद करके संगीत लगा लें तो उसे ध्यान मान लेते हैं; पर वहाँ मन चलता रहता है। मन चले तो ध्यान कैसे होगा? मन चले तो आप मन के साथ हैं। मन के साथ हों तो वह रिलैक्सेशन कहाँ मिलेगा? आत्मा के साथ हों तभी तो आप सचमुच रिलैक्स होते हैं।

इसीलिए गाइडिंग, म्यूज़िक नहीं शांत होकर "श्वास पर ध्यास'' रखें तो दो लाभ होते हैं। एक मन में जो विचार हैं, वे पूरी तरह हटते जाते हैं। ध्यान में बैठते-बैठते अपार शक्ति प्राप्त करते हैं। नींद में भी बहुत शक्ति प्राप्त करते हैं।

लेकिन संगीत आदि लगाकर बैठने पर मन विचारों से हटकर संगीत पर मुड़ता है, इसलिए मन के विचार वैसे ही बने रहते हैं; दिन-प्रतिदिन बढ़ते जाते हैं। विचारों के साथ बैठने से शक्ति नहीं आती। इस तरह दो प्रकार से नुकसान होता है। किया हुआ समय भी व्यर्थ हो जाता है।

इस जन्म में हमें ध्यान करके लाभ लेने का अच्छा अवसर दिया

गया है। अलग-अलग प्रकार के ध्यान करने से वह अवसर खो देते हैं। और अगर ऐसे ही चलता रहा तो वह जन्म भी व्यर्थ कर देने वाले बनते हैं।

ध्यान में आकर “श्वास पर ध्यास” छोड़कर दिखावे के लिए, लाभ के लिए, अनुभवों के लिए किसी भी प्रकार का ध्यान करें, वह सब व्यर्थ है यह बात उन्हें शरीर छोड़ने के बाद ही समझ में आती है। तब कोई, कुछ भी नहीं कर सकता।

और कुछ मास्टर अजीब तरह से कहते हैं सांसारिक जीवन में तकनीक आदि में बहुत परिवर्तन आ रहे हैं; वैसे ही आध्यात्म में भी बहुत परिवर्तन आते रहते हैं। सच में उन्हें पागल ही मानना चाहिए। दुनिया तो हमेशा बदलती रहती है। इस दुनिया में, इस प्रकृति में परिवर्तन स्वाभाविक है पात्रीजी ने कहा।

लेकिन आध्यात्म में अर्थात् आत्मा में परिवर्तन नहीं होता, और न होगा। यदि बदल जाए तो वह आत्मा नहीं, सत्य नहीं। आत्मा के बारे में, भगवान के बारे में अनेक प्रकार से समझाया जा सकता है; समझाने की शैली बदल सकती है। आत्मा में परिवर्तन नहीं होता। यह बात उन्हें समझ में नहीं आती, इसलिए वे ये किताबें-वो किताबें पढ़कर, यूट्यूब देखकर जो कोई जो कहे उसे अपनाते रहते हैं। वे शरीर छोड़ें तब ही उन्हें आत्मा और मन का अंतर समझ में आता है।

अतः आध्यात्म में कोई परिवर्तन नहीं होता। कोई भी हो युग कितने भी बदलें आत्म-स्थिति प्राप्त करनी ही है, मोक्ष पाना ही है, “मैं आत्मा हूँ” यह बात जाननी ही है।

इसलिए आप में जो ज्ञान-ज्योति है उसे प्रकाशित कीजिए, कर्म-रहित बनिए, जन्म-रहित अवस्था प्राप्त कीजिए।

Tatavarthy Raghavarao Sir Books in English

1. Life Science (Part-I)	Rs.120
2. Why is Guiding Not Meditation ?	Rs.100
3. Which is the right meditation ?	Rs.100
4. Die before death!	Rs.120
5. The Law of Karma	Rs.100
6. Losses caused by Desires	Rs.100
7. Benefits of knowing what happens after death	Rs.100
8. What is Meditation?	Rs.80
9. True Path	Rs.80
10. Why soul-knowledge ?	Rs.70
11. What comes after death ?	Rs.70
12. Learnings through the male and female births	Rs.70
13. Who are Soul-murderes?	Rs.70
14. How to improve Financial Status ?	Rs.60
15. Wisdom is attained only through Meditation	Rs.60
16. Brahma Jnan	Rs.60
17. What is Intention?	Rs.50
18. Why is this life?	Rs.50
19. Shankaracharya's Jagrata panchakam	Rs.50
20. Vegetarian Food Is Human Food	Rs.50
21. Brahman means?	Rs.50
22. How to become a master?	Rs.50
23. How to become a champion ?	Rs.50
24. Truth	Rs.50
25. Meditation for the Development of Students	Rs.40
26. Non violence and vegetarianism	Rs.40

REBIRTH (Tatavarthy Rajya Lakshmi)	Rs.150
---	---------------

What is Ignorance (Avidya) ?	Rs.70
-------------------------------------	--------------



श्री तटवर्ती वीर राघवराव के हिन्दी किताब

1. आत्म शास्त्र ।.....Rs.200/-
2. ध्यान विद्या ।.....Rs.160/-
3. भगवद गीता का सार ।.....Rs.160/-
4. सत्य मार्ग ।.....Rs.160/-
5. मरने से पहले मरना है।.....Rs.130/-
6. गार्डिंग ध्यान क्यों नहीं ?Rs.120/-
7. भगवान कौन है।.....Rs.120/-
8. कर्म सिद्धांत।.....Rs.120/-
9. विज्ञान का अर्थ - निहितार्थ ।.....Rs.120/-
10. ब्रह्म ज्ञान।.....Rs.100/-
11. यह जीवन क्यों है ?Rs.100/-
12. मेहर बाबा का संदेश ।.....Rs.100/-
13. कौन सा ध्यान सही है ?Rs.100/-
14. इच्छाओं के कारण होने वाली हानियाँRs.100/-
15. शंकराचार्य जी का ज्ञान संदेशRs.100/-
16. कठोपनिषद्Rs.100/-
17. उपमान ज्ञान संदेशRs.100/-
18. शिरडी साईं के संदेशोंRs.100/-
19. मरने के बाद, साथ में आने वाले विषयों ।Rs.80/-
20. भगवत के दृश्यों का अर्थ ।.....Rs.80/-
21. आत्म हंतक कौन होता है ।.....Rs.70/-
22. स्त्री जन्मों में सीखने वाले विषयों, पुरुष जन्मों में सीखने वाले विषयों।.....Rs.70/-
23. दुख निवारण का मार्गRs.75/-
24. उत्तम पुरुषRs.60/-
25. आर्थिक स्थिति बढ़ाना है तो ?Rs.60/-
26. निर्वाण मार्गRs.60/-
27. सत्यRs.50/-
28. क्या हम इस लोक के वासी हैं या परलोक के वासी हैं ?Rs.50/-
29. गुरु को पहचानना कैसे ?Rs.50/-
30. विद्यार्थियों के विकास के लिए ध्यान विद्याRs.50/-
31. शाकाहार ही मानव का आहार है!.....Rs.50/-
32. ब्रह्म क्या है ?Rs.50/-
33. शंकराचार्य जी का जाग्रत पंचकRs.50/-
34. शंकराचार्य जी का निर्वाण शट्कमRs.50/-
35. चैंपियन बनना हो तो ?Rs.50/-
36. तीन प्रकार के जीवनRs.50/-
37. संकल्प अर्थात ?Rs.40/-



- ◆ “जो लोग ज्ञान के लिए ‘श्वास पर ध्यान’ की ध्यान-साधना करते हैं, उन्हें ज्ञान की प्राप्ति के लिए कुछ दिनों तक प्रतीक्षा करनी पड़ती है। उस प्रतीक्षा के समय ऐसा प्रतीत हो सकता है कि उनका किया हुआ प्रयास व्यर्थ गया। परंतु निराश हुए बिना यदि वे उसी प्रकार साधना जारी रखें, तो किसी न किसी दिन फल स्वयं प्राप्त होगा। आपका किया हुआ श्रम अवश्य फलित होगा।”
- ◆ “मनुष्य का जीवन कब समाप्त हो जाएगा, यह किसी को ज्ञात नहीं। इसलिए अवसर रहते ही ध्यान-साधना करनी चाहिए, ज्ञान अर्जित करना चाहिए, आत्मा को जानने का प्रयास करना चाहिए, और जो ज्ञान स्वयं ने जाना है उसे दूसरों के साथ बाँटने का भी प्रयास करना चाहिए।”
- ◆ “जिसका मन मलिन होता है, वह सुनी हुई बातों को ठीक से समझ नहीं पाता। उसमें विवेक नहीं रहता, वह सही निर्णय नहीं कर पाता और मूर्ख की भाँति आचरण करता है। इतना ही नहीं, वह बुरी आदतों और दुष्ट व्यसनों का दास बन जाता है और उनसे उत्पन्न कष्टों को सह न पाने के कारण जीवन में ही नरक का अनुभव करता है। परंतु जिनका मन शुद्ध होता है, वे अपने कर्मों के फल को जानकर उनसे केवल शुभ ही प्राप्त करते हैं।”

- ब्रह्मर्षि तटवर्ती वीर राघव राव

Rs.100/-

Scan these QR codes using Google Lens to download the books of Mr. Tatavarthy Veera Raghava Rao & Mrs. Rajyalakshmi from the website.



Telugu
Books



English
Books



Hindi
Books



Kannada
Books



Tamil
Books